त्रैमासिक पत्रिका
हमार गाँव
जनवरी – मार्च, 2017, वर्ष 16 : अंक 64

vkb0,l0,l0,u0 u0 0972&7825

इस अंक में

क्र0सं0	विषय		पृष्ठ सं0
1.	माननीय कुलपति जी का संदेश	-	03
2.	गुलदाऊदी की खेती	-	05
3.	अमृतफल बेल	-	08
4.	भारतीय कृषि विकास के लिए उपयोगी सुझाव	-	09
5.	शरीर शुद्धिकर फल : नींबू	-	11
6.	जीरो टिलेज अपनायें एवं पछेती गेंहू का	-	12
7.	खाद एवं उर्वरक फसलों के लिए	-	14
8.	वर्मी कम्पोस्ट मृदा स्वास्थ्य व पर्यावरण	-	21
9.	पोषण से भरपूर ही पत्तेदार सब्जियां	-	23
10.	तोरई की फसल में अच्छी उपज लेने	-	25
11.	पीपल	-	28
12.	राई-सरसों की फसल में कीट एवं रोग	-	29
13.	सदस्यता फार्म		

प्रधान संरक्षक
डॉ० राजेन्द्र बी० लाल
कुलपति,
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वसिद्यालय
इलाहाबाद – 211 007

❖❖❖

संरक्षक
प्रो० (डॉ०) एस० बी० लाल, प्रति कुलपति
प्रो० (डॉ०) जोनाथन ए० लाल, निदेशक (आई०पी०सी०)
प्रो० (डॉ०) आरिफ ए० ब्राडवे, निदेशक (प्रसार)
प्रो० (डॉ०) शैलेश मारकर, निदेशक (शोध)

❖❖❖

सलाहकार मंडल
प्रो० (डॉ०) जोनाथन ए० लाल, निदेशक (आई०पी०सी०), प्रो० डॉ० आरिफ ए० ब्राडवे, प्रो० डॉ० डी० बी० सिंह, प्रो० डॉ० प्रमिला गुप्ता, प्रो० डॉ० पी० डब्ल्यू० रामटेके, प्रो० डॉ० वी० एम० प्रसाद

❖❖❖

प्रभागाध्यक्ष एवं मुख्य संपादक
(ई.आर.) सी. जे. वेसली

❖❖❖

डिजाइन एवं ले आऊट
दीप्ति लाल

लेख, सदस्यता एवं विज्ञापन हेतु निम्न पते पर लिखें या सम्पर्क करें –

विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय
इलाहाबाद – **211 007**
फोन :– **(0532) 2684278, 2684284, 2684290**

वार्षिक व्यक्तिगत सदस्यता शुल्क रू०. **200**/– । संस्था सदस्यता शुल्क **350**/– (डाक खर्च अतिरिक्त)

पत्रिका में प्रकाशित समस्त लेख व रचनाओं से प्रकाशक एवं सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। ये लेखकों के निजी विचार और सुझाव हैं।

एग्गीज़

शुद्ध, स्वच्छ, रोगाणु रहित, उच्च वैज्ञानिक विधि द्वारा उपचारित

स्टैन्डर्ड दूध
टोन्ड दूध
डबल टोन्ड दूध
सुगन्धित दूध
टेबिल बटर
कुकिंग बटर
पनीर
दही
खोआ
देशी घी
विभिन्न प्रकार की आइसक्रीम

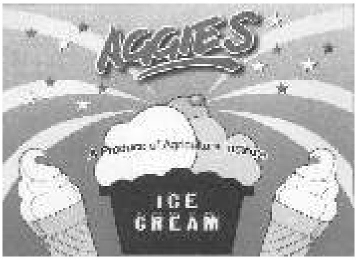

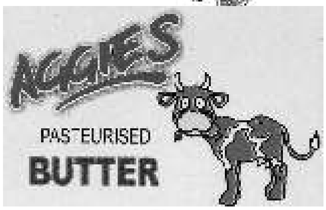

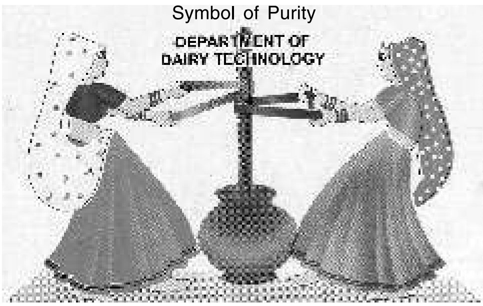

डेयरी अधीक्षक

स्टूडेन्ट्स ट्रेनिंग डेयरी

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

इलाहाबाद – २११ ००७ (उ०प्र०) फोन – २६८४६०१

शादी एवं पार्टियों के शुभ अवसर पर सप्लाई की विशेष सुविधा उपलब्ध।

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

Sam Higginbottom University of Agriculture, Technology And Sciences

(U.P. State Act No. 35 of 2016, as passed by the Uttar Pradesh Legislature)

Allahabad - 211 007 U.P. India

मोस्ट. रेव्ह (प्रोफे० डा०) राजेन्द्र बी० लाल, कुलपति
Most. Rev. (Prof. Dr.) Rajendra B. Lal, Vice-Chancellor
Ph.D.Soil Science (Kansas State University, U.S.A.)
Ph.D.Ag. Botany (Kanpur)
PDF Envion. Chem (K.S.U., USA)
FISAC, Gamma Sigma Delta Scholar.

Office : 0532-2684284
Res. : 0532-2684587
Fax : 0532-2684593
E-Mail : vicechancellor@shiats.edu.in

माननीय कुलपति का संदेश

भारत कृषि प्रधान देश है, परन्तु यहां कृषि की दशा संतोषजनक नहीं है। कृषि उत्पादन में वृद्धि पूर्व में जनवृद्धि दर से भी कम रही। इसी कारण 1975 तक देश की खाद्‌य समस्या जटिल बनी रही। निम्न स्तर पर सीमित विकास के बावजूद आज भी भारतीय कृषि परम्परावादी है। भारतीय किसान खेती व्यवसाय के रूप में नहीं करता है, बल्कि जीविकोपार्जन के लिये करता है। कृषि की पुरानी परम्परागत विधियों, पूंजी की कमी, भूमि सुधार की अपूर्णता, विपणन एवं वित्त संबधी कठिनाईयों आदि के कारण भारतीय कृषि की उत्पादकता अत्यन्त न्यून है। अब नई पीढ़ी में शिक्षा एवं कृषि को कमाई का साधन मानने की प्रवृति से भी कृषि एवं कृषक की आर्थिक दशा में कुछ सुधार आने लगा है। जुताई रहित कृषि या बिना जुताई के खेती (No-till farming)] खेती करने का वह तरीका है जिसमें भूमि को बिना जोते ही बार बार कई वर्षो तक फसलें उगायी जाती है। यह कृषि की नई विधि है जिसके कई लाभ है।

शाक सब्जियां पौधे के कहे जा सकने वाले हिस्से को कहते है। सब्जियां सारे भारत में आसानी से प्राप्त हो जाती है। शाक-सब्जियों का सेवन हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण है। हरी शाक सब्जियों में लौह तत्त्व प्र्याप्त मात्रा में पाये जाते है, जिससे शरीर में खून की कमी नहीं होती है। गुलदाउदी का पौधा शाक की श्रेणी में आता है। इसकी जड़ें मुख्यतया प्रधान मूल, शाखादार और रेशेदार होती है। तना कोमल, सीधा तथा कभी-कभी रोएंदार होता है। पत्तियां एकांतर सम, पालिवृ्त होती है। गुलदाउदी मुख्यताः वर्धीप्रचारण अथवा बीजांकुर द्वारा उगाई जाती है। सुंदरता के साथ साथ गुलदाउदी की कुछ जातियों के फूल कीटनाशक गुणवाले होते है। आयुर्वेद में बेल को अत्यन्त गुणकारी फल माना जाता है। यह एक ऐसा फल है जिसके पत्ते, जड़ और छाल

भी उपयोगी है। उष्ण कटिबंधीय फल बेल के वृक्ष हिमालय की तराई, मध्य एवं दक्षिण भारत बिहार, तथा बंगाल में घने जंगलों में अधिकता से पाए जाते है। चूर्ण आदि औषधीय प्रयोग में बेल का कच्चा फल, मुरब्बे के लिए अधपका फल और शर्बत के लिए पका फल काम में लाया जाता है। जिस प्रकार मनुष्य तथा पशुओं के लिए भोजन की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार फसलों से उपज लेने के लिए पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्वों की आपूर्ति करना आवश्यक है। केंचुआ खाद या वर्मीकम्पोस्ट पोषण पदार्थो से भरपूर एक उत्तम जैव उर्वरक है। यह केंचुआ आदि कीड़ों के द्वारा वनस्पतियों एवं भोजन के कचरे आदि को विघटित करके बनाई जाती है। वर्मी कम्पोस्ट में बदबू नहीं होती है और मक्खी एवं मच्छर नहीं बढ़ते है तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता है। हरी पत्तेदार सब्जियां हमारे जीवन में बहुत मूल्य रखती है क्योंकि इसे खाने से हमें हर प्रकार का पोषण मिलता है और हमारी सारी बीमारियां दूर होती है। जितनी भी सब्जियों हरे रंग की श्रेणी में आती है वह सब स्वास्थ्यवर्धक मानी जाती है। नींबू यानि लेमन को वैज्ञानिक भाषा में साइट्रस लेमन कहा जाता है। नींबू एक खट्टा फल है जो सबसे ज्यादा एशिया में खासतौर पर उत्तरी भारत, नॉर्थ बर्मा और चीन में पाया जाता है। नींबू पीले रंग का होता है और छोटे से पौधे पर उगता है। तोरई की खेती सारे भारत में की जाती है। लेकिन इसकी खेती मुख्य रूप से केरल, उड़ीसा, कर्नाटक, बंगाल और उत्तर प्रदेश में की जाती है। यह बेल पर लगने वाली सब्जी होती है। जिसे हर मनुष्य खाने में पसंद करता है। यह सब्जी ठंडी होती है इसलिए इसका उपयोग गर्मी के मौसम में किया जाता है। सरसों की खेती मुख्य रूप से सभी जगहों पर की जाती है। इस फसल की खेती अधिकतर तेल के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में की जाती है तथा शहरी क्षेत्रों के आसपास हरी सब्जी के रूप में पैदा की जाती है। भारतवर्ष में कुछ मैदानी भागों में अधिक पैदा की जाती है। पीपल का वृक्ष पवित्र, अश्वत्थ, ज्ञान देने वाला, शुद्ध वायु प्रदाता तथा गुणों की खान माना गया है। एक गमले में पीपल का छोटा पौधा लगाकर बैठक में रखने से ऑक्सीजन के सिलेण्डर की जरूर नहीं पड़ती। इस वृक्ष की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पीपल दिन रात शुद्ध वायु देता है। अन्य वृक्षों की तरह यह रात में कार्बन डाईऑक्साइड नहीं छोड़ता।

देश की तीन-चौथाई जनता खेती पर निर्भर है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद खेती के विकास पर अरबों रूपये खर्च किये गये, फिर भी वांछित उन्नति नहीं हुई। इसलिये हमें कृषि के क्षेत्र में क्रांति लानी होगी। कृषि के सभी पहलुओं को समान रूप से संभालना होगा। कृषि में क्रांति वास्तव में दीर्घकालीन दृष्टिकोण अपनाकर ही लाई जा सकती है। तात्कालिक आवश्यकता के लिए व्यवसायिक फसलों के बजाय किसान अनाज उगायें, लेकिन दीर्घकालीन दृष्टि से, देश के निर्यात और औद्योगिक विकास की दृष्टि से व्यवसायिक फसलों का उत्पादन भी बढ़ाना होगा। किसानों को खेती की नवीनतम जानकारी देनी होगी तथा उसे रासायनिक खाद, मशीनें, उन्नत बीज, कीटमार दवायें, समय पर तथा उचित दाम पर उपलब्ध कराना होगा। ऐसा होने पर ही ना केवल कृषि उत्पादकता में तेजी से वृद्धि होगी, बल्कि इसके परिणामस्वरूप प्रदेश एवं देश के कृषक समृद्धशाली होगें तथा देश का आर्थिक विकास भी द्रुत गति से आगे बढ़ेगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

मोस्ट. रेव्ह0 (प्रो0डॉ0) राजेन्द्र बी0 लाल
कुलपति
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय
(कृषक मित्र)

गुलदाउदी की खेती

प्रो0 (डॉ0) विल्सन किस्पोट्टा
निदेशक प्रसार
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 टी. डी. मिश्रा
विषय वस्तु विशेषज्ञ
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

फूलो में गुलदाउदी का विशिष्टि एवं महत्वपूर्ण स्थान है। गुलदाउदी फारसी भाषा का शब्द है। सम्भवतः मुगल बादशाओं ने इसे मोहक और रंगारंग सौन्दर्य का निरूपण करने के लिए दिया हो। वैदिक ग्रन्थों में इसका वर्णन शतपत्री के नाम से मिलता है और ''चन्द्रमल्लिका'' के नाम से भी पुकारी जाती थी।

जलवायु : गुलदाउदी की वृद्धि और उत्पादन में जलवायु अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। वायुमण्डल और सूर्य के प्रकाश का विशिष्टि एवं महत्वपूर्ण स्थान है, इसी कारण भारत के मौदानी क्षेत्रों में सर्वोत्तम फूल नवम्बर के उपरान्त ही प्राप्त होते है। ऊँचे स्थानों पर जहाँ मौसम ठण्डा रहता है और वर्षा कम होती है वहाँ गुलदाउदी को अगस्त–सितम्बर में फूल लेने के उद्देश्य से उगाया जाता है, किन्तु साधारणतया छोटे दिवस रखने वाली शरत ऋतु में इसे प्रदर्शनीय पुष्पों के लिए उगाया जाता है।

मिट्टी और उसकी तैयारी : गुलदाउदी का कृषि क्षेत्र अत्यन्त बड़ा है। इसे मध्य प्रदेश की काली मिट्टी में हिसमयल की स्लेटी मिट्टी में महाबलेश्वर की पश्चिमी पहाड़ियों की लौहयुक्त मिट्टी और उत्तर प्रदेश के सभी स्थानों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। दोमट मिट्टी गुलदाउदी को सफल खेती के लिए सर्वोत्तम पाई गई है।

गुलदाऊदी के सफल उत्पादन के लिए भूमि की तैयारी का विशिष्टि महत्व है। अतः मिट्टी की तैयारी ऐसी की जानी चाहिए कि जिसमें जड़ों का विकास सुगमता से हो सके और पौध स्वस्थ हो सके। मिट्टी में नमी बनी रहे और पोषक तत्व रोकने की सामर्थ्य हो।

गुलदाउदी की उन्नत किस्में : सर्वसाधारण की जानकारी के लिए गुलादऊदी का फूल खिलने का समयानुसार वर्गीकरण निम्नवत है –

किस्म का नाम	रोपाई का समय	फूल खिलने का समय
लाल किला, नीलिमा	सितम्बर	दिसम्बर– जनवरी
इलनी कैसकेड	सितम्बर	फरवरी– मार्च
उषा	जनवरी	अप्रैल– मई
दीप्ति, ज्वाला	फरवरी	मई–जून
रिमझिम, वर्षा	फरवरी	जून–अक्टूबर
शिव फुजी	मार्च	सितम्बर
शरद माला, शरद श्रृंगार मेगामी	जुलाई	अक्टूबर–नवम्बर
बिरबल साहनी, जयन्ती, अप्सरा	जुलाई	नवम्बर–दिसम्बर
फलर्ट, लिलिथ, ज्योत्सना, कस्तूरी, कौमुदी	अगस्त	दिसम्बर

नवीनतम किस्में : अर्का गेगा, अर्का रवि और अर्का स्वर्ण (आई.आई.एच.आर., बंगलौर) शान्ति, वाई 2 के, कारगिल डायना और सद्भावना (एन.वी.आर.आई. लखनऊ) को खेती के लिए जारी किया गया ।

शीघ्र ही में राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान लखनऊ द्वारा गुलदाउदाी की नवीन किस्में विकसित की गई।

शन्ति : यह मूलतः फूलों वाली सजावटी किस्म है। इसका पौधों 51.2 प्रतिशत तक लम्बा फूलों का उपयोग माला, हार व गुलदस्ते बनाने के लिए किया जाता है।

सद्भावना : यह किस्म मूलतः छोटे व लाल रंग के फूलों वाली किस्म है। इसे खड़ा रहने के लिए किसी सहारे की आवश्यकता नहीं होती है। इस किस्म के फूल प्रायः दिसम्बर में खिलते हैं। इसके पौधे का स्वभाव एवं आकार छोटी खेती के लिए उपयुक्त होता है।

वाई 2 के : यह एक छोटी एवं छोटे फूलों वाली किस्म है। इसे खड़े रहने के लिए किसी सहारे की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

कारगिल 99 : इस किस्म को विकास कारगिल युद्ध में शहीद हुए भारतीय जवानों की श्रद्धांजली के तौर पर तैयार किया गया है। यह छोटे फूलों वाली चम्मच के आकार की पीले चक्र वाली होती है। सबसे रोचक बात है कि इसकी पत्तियाँ वर्ष भर हरी रहने वाली व रंग बिरंगी होती है। इसका पौधा सघन, छोटा और अत्यधिक खिलने वाला होता है। इसके फूल खिलने का समय सितम्बर का महीना है।

खाद एवं उर्वरक : गुलदाऊदी के पौधे मिट्टी से बड़ी मात्रा में पोषक तत्वों लेते हैं आहार परिवर्तन में रूचि रखते हैं तथा यही कारण है कि गुलदाऊदी को खाद की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है ।

गोबर की खाद	– 15 टन/हेक्टेयर
नाइट्रोजन	– 20–25 किलोग्राम/हेक्टेयर
फॉस्फोरस	– 100 किलोग्राम/हेक्टेयर
पोटाश	– किलोग्राम/हेक्टेयर

गुलदाऊदी के पौधे मिट्टी से बड़ी मात्रा में पोषक तत्वों को लेते हैं और आहार परिवर्तन में रूचि रखते हैं। यही कारण है कि गुलदाऊदी को खाद की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है।

नाइट्रोजन : यह पौधों की बढ़वार में सहायक है। इससे पौधे के पत्तों, तनों की लम्बाई और फूलों के आकार में वृद्धि होती है। इसकी पूर्ति के लए जैविक और रासायनिक खादों का उपयोग किया जा सकता है। यदि इस तत्व की भूमि के कमी होती है तो पौधे की लम्बाई कम और पत्तियों का रंग पीला पड़ा जाता है। दूसरी ओर यदि भूमि में इसकी मात्रा अधिक होती है तो पौधे की वानस्पतिक बढ़वार अधिक होती है जिसके कारण तना कमजोर हो जाता है, पत्तियाँ कठोर और फूल देर से आते है।

पोटाश : इससे पौधा स्वस्थ रहता है। पौधों में रोगों के विरूद्ध अधिक सहन शक्ति आ जाती है। इसकी कमी होने से पौधे की पत्तियों के किनारे कत्थई रंग के हो जाते हैं

फास्फोरस : इसकी कमी से जड़ों की बढ़वार ठीक नहीं हो पाती है। फूल भी छोटे रह जाते है। पत्तियों के किनारे लाल रंग के हो जाते है।

गुलदाऊदी का प्रवर्धन : गुलदाऊदी का प्रवर्धन दो प्रकार से किया जाता है जिसका उल्लेख नीचे किया गया है –

बीज द्वारा : गुलदाऊदी की एकवर्षीय किस्मों को पौधशाला में बीज बोकर पौध तैयार की जाती है। तैयार पौधे को सितम्बर–अक्टूबर में क्यारियों में लगाया जाता है, जो उत्तरी भारत में जनवरी से मार्च तक फूल देते है। इन किस्मों के पौधे लगभग 60–675 सेमी तक ऊँचे बढ़ते है।

जड़ो को लगाकर : गुलदाऊदी की बहुवर्षीय किस्मों को जड़ों द्वारा उगाया जाता है। इसमें अधिकतक डबल कोरियन, टाइप जैसी बीरबल सहाहनी, किस्म ही खेत में उगाई जाती है। गुलदाऊदी का सफेद व पीला फूल बाजार में अधिक पसंद किया जाता है।

बड़े आकार के फूल उगाना : बड़े आकार के फूल दो प्रकार से उगााये जा सकते हैं –

1. एक फूल का पौधा उगाना ।
2. दो या तीन फूल पौधे उगाना ।

इस प्रकार के पौधे के लिए बड़े फूल वाली किस्मों का ही चयन किया जाता है, जैसे प्रतिक्षिप्त, आकुंचित आदि। बड़े आकार के लिए चुनी गयी किस्मों को अधिकतर कर्तन द्वारा लगाया जाता है और जब जड़ें 2 से 3 सेमी लम्बी हो जाये तो गमलों में रोप दिया जाता है। नई जड़ें निकलने का समय किस्म और मौसम पर

निर्भर करता है आमतौर प 2–3 सेमी लम्बी जड़े 3 से 5 सप्ताह में निकल आती है। 20 सेमी व्यास वाला गमला होना चाहिए –

गोबर की खाद	–	दो भाग
पत्ती की खाद	–	दो भाग
चिकनी मिट्टी	–	एक भाग
हड्डी की खाद	–	दो भाग

पौध रोपण के उपरान्त उनकी जड़ों की ऊपर की मिट्टी की उंगलियों से भली भाँति दबा देवना चाहिए। गमलों को ऊपर से लगभग 4 सेमी खाली रखना चाहिए। रोपण के 5 दिन बाद एक सेमी मोटी बारीख खली की खाद की तकह गमले में बिछा देनी चाहिए जिससे पानी देने पर खाद घुलकर पौधों को मिलती रहे। अगस्त महीने में तरल खाद देना शुरू कर देना चाहिए क्योंकि इतने दिनों में जड़ें भलीभाँति विकसित पोटेशियम नाइट्रेट, 10 लीटर पानी में घोलकर पौधे में दिया जाता है। यह प्रथम बार सितम्बर के शुरू में और दूसरी बार सितम्बर के मध्य में देना चाहिए। सितम्बर के अन्त में या अक्टूबर के शरू में गमले के ऊपर 2.0 से 2.5 सेमी जगह निम्न मिश्रण से भर देनी चाहिए –

गोबर की खाद	–	एक भाग
बग की मिट्टी	–	एक भाग
लकड़ी की रखा	–	एक भाग
नीम की खली	–	1/4 भाग

अक्टूबर के शुरू में पौधों पर कलियाँ आनी शुरू हो जाती है। ध्यान रहे इस समय पौधों को खाद देना बन्द कर देना चाहिए अन्यथा पौधे की वानस्पितिक बढ़वार होती रहेगी और फूल अच्छा नहीं बनेगा।

सिंचाई : गुलदाऊदी के पौधें की सिंचाई सरल नहीं है। कोई समय और अवधि उसकी सिंचाई के लिए निश्चित करना कठिन है। पानी तब दें, जब पौधें को आवश्यकता हो और उतनी मात्रा में दें जितनी मात्रा में आवश्यक हो। पौधे ढालू स्थान पर लगाने हो तो प्रत्येक पौधे अथवा उनकी क्यारी का इतना गहरा थाला बांधे कि सिंचाई और वर्षा का पानी रूक सके और सीधा न बह जाये। वृद्धि काल में उनको निःसन्देह प्रतिदिन पानी देना चाहिए भूमि के पौधों की अपेक्षा गमलों में लगे पौधे शीघ्र शुष्क होते हैं और पानी मांगते है। प्रत्येक रोपाई या बदलाई के उपरान्त, पानी कम से कम एक दिन उपरान्त दें जिसे कोमल जड़ें नमी मिट्टी में प्रवेश कर सकें। ग्रीष्म ऋतु में, सिंचाई सूर्यास्त होने के उपरान्त ही करें जिससे पौधे रात को भी पानी से पूरा लाभ उठा सकें ।

पौध संरक्षण : गुलदाऊदी की फसल को विभिन्न प्रकार के रोग व कीट उसकी विभन्न अवस्थाओं में क्षति पहुँचाते है। प्रमुख रोग व कीटों की रोकथाम के लिए निम्नि पौध संरक्षण उपाय अपनायें –

गेरूई फफूंदी : पौधों की चोटी पर गिरकर जो पानी रूक जाता है वह यह रोग उत्पन्न कर देता है। कलियाँ कुरूप हो जाती है। जो गमले अचानक वर्षा के कारण छाया में लाये गये हों उनका पानी झाड़कर कुछ समय के लिए बाहर रख देना चाहिए ताकि उनकी नमी पूर्ण रूप से उ़ड जायें।

भूरी फफूंदी : यह एक प्रकार की भूरे रंग की बुकनीदार वस्तु की झिल्ली सी उत्पन्न होकर पत्तियों को ढक लेती है। यह मधुरिका रोग का एक रूप है, जो बहुत से पौधों पर लग जाता है। इस रोग का आक्रमण उन पौधों पर विशेष रूप से होता है जो पास–पास रहते हैं और जिनके मध्य वायु और प्रकाश का प्रवेश ठीक नहीं हो पाता है। यदि इस रोग का समय से रोकथाम न की जाये तो यह पत्तियों से पुष्पों की पंखुड़ियाँ तक पहुँच जाता है और इस प्रकार पौधे की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पोटेशियम सल्फाइड या केराथेन के घोल के छिड़काव से यह नष्ट हो जाता है। पत्यिों पर गन्धक की धूल की बुकनी करने से भी लाभ होता है।

कीट

थ्रिप्स : ये बहुत छोटे कीट पत्तियों की निचली सतहों पर आक्रमण करते हैं और उनकी त्वचा में छिद्र करके अन्दर प्रवेश कर जाते है। ये जीवन रस को चूसते है। प्रौढ़ कीट बादामी रंग को हो जाता है किन्तु आकार में छोटा ही रहता है। इनकी इल्ली (लाखा) पीले रंग के और बिना पैर वाले होते है। दोनों ही बहुत चंचल होते हैं और छेड़ते ही कूद पड़ते हैं। रस चूसने के कारण पत्तियाँ पीली पड़ जाती है। तम्बाकू की धूनी देने अथवा साबुन के घोल का छिड़काव करने से इनसे छुटकारा मिल जाता है।

शेष पृष्ठ सं० 20--पर

अमृतफल बेल

शिखा कुमारी
शोध छात्रा
खाद्य और पोषण विभाग
ईथलिण्ड स्कूल ऑफ होम साइंस
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 रितु दुबे
सह–प्रवक्ता
खाद्य और पोषण विभाग
ईथलिण्ड स्कूल ऑफ होम साइंस
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

बेल या बिल्व का अर्थ हैः
रोगान् बिलति भिनति इति बिल्वः।

जो रोगों का नाश करें वह बिल्व। बेल के विधिवत् सेवन से शरीर स्वस्थ और सुडौल बनता है। बेल की जड़, शाखाएँ, पत्ते, छाल और फल, सब–के–सब औषधियाँ है। बेल में हृदय का बल और दिमाग को ताजगी देने के साथ सात्विक शांति प्रदान करने का भी श्रेष्ठ गुण है। यह स्निग्ध, मुलायम और उष्ण होता है। इसके गूदे, पत्तों तथा बीजों में उड़नशील तेल पाया जाता है, जो औषधीय गुणों से भरपूर होता है। कच्चे और पके बेलफल के गुण तथा उससे होने वाले लाभ अलग–अलग प्रकार के होते हैं।

कच्चा बेलफल भूख व पाचनशक्ति बढ़ाने वाला तथा कृमियों का नाश करने वाला है। यह मल के साथ बहने वाले जलयुक्त भाग का शोषण करने वाला होने के कारण अतिसार रोग में अत्यन्त हितकर है। इसके नियमित सेवन से कॉलरा (हैजा) से रक्षण होता है।

पका हुआ बेलफल मधुर, कसैला, पचने में भारी तथा मृदु विरेचक है। इसके सेवन से दस्त साफ होते हैं।

औषधि–प्रयोगः

(1) संग्रहणीः इस व्याधि में पाचनशक्ति अत्यंत कमजोर हो जाती है। बार–बार दुर्गधयुक्त चिकने दस्त होते हैं। इसके लिए दो बेलफल का गूदा 400 मि.ली. पानी में उबालकर छान लें। फिर ठंडा कर उसमें 20 ग्राम शहद मिलाकर सेवन करें।

पुरानी संग्रहणीः प्रतिदिन बेल का 100 ग्राम गूदा व 250 ग्राम दूध के तीन सम भाग कर लें और सुबह, दोपहर व शाम को एक–एक भाग को मिलाकर पियें।

(2) पेचिशः बेलफल आँतों को शक्ति देता है। एक बेल के गूदे से बीज निकालकर सुबह शाम सेवन करने से पेट में मरोड़ नहीं आती है। उम्र के अनुसार बेल की मात्रा कम–ज्यादा करें।

(3) जलनः 200 मि.ली. पानी में 25 ग्राम बेल का गूदा व 25 ग्राम मिश्री मिलाने पर जो शरबत बनता है उसे पीने से छाती, पेट, आँख या पाँव की जलन में राहत मिलती है।

(4) मुँह के छालेः एक बेल का गूदा 100 ग्राम पानी में उबालें। ठंडा हो जाने पर उस पानी से कुल्ले करें। छाले छू हो जायेंगे।

(5) प्रमेहः बेल एवं बकुल की छाल का 2 ग्राम चूर्ण दूध के साथ लें।

(6) दिमागी थकावटः एक पके बेल का गूदा रात्रि के समय पानी में मिलाकर मिट्टी के बर्तन में रखें। सुबह छानकर इसमें मिश्री मिला लें और प्रतिदिन पियें। इससे दिमाग तरोताजा हो जाता है।

(7) कान का दर्द, बहरापनः बेलफल को गोमूत्र में पीसकर उसे 100 मि.ली. दूध, 300 मि.ली. पानी तथा 100 मि.ली. तिल के तेल में मिलाकर धीमी आँच पर

शेष पृष्ठ सं० 10--पर

भारतीय कृषि विकास के लिए उपयोगी सुझाव

डॉ0 मदन सेन सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रो0 डॉ0 विल्सन किस्पोटा
निदेशक प्रसार
प्रसार निदेशालय
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसका देश के सकल उत्पाद में लगभग 16 प्रतिशत योगदान है। यहाँ की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या आज भी कृषि पर निर्भर है जो अधिकांशतः ग्रामों में निवास करती है। आज अन्नदाता कहे जाने वाले किसान परिस्थितियों के दुष्चक्र में फँसकर आत्महत्या करने को तैयार है। नई–नई कृषि नीति घोषित होने के बावजूद भारत में कृषि क्षेत्र में आए गंभीर संकट के कारण किसान एवं खेतिहर मजदूर बड़ी संख्या में बेरोजगारी, गरीबी और कर्ज में फँस गये हैं जिससे किसान परेशान नजर आ रहा है। कुछ किसान देश के अनेक राज्यों, जैसे महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश आदि में इसी मार्ग से गुजर चुके हैं। जिस देश में 65 फीसदी लोग खेती से जुड़े हों और जिस देश में कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ मानी जाती है उसमें पिछले कुछ सालों से खेती में गिरावट आना चिंता का विषय है। इसलिए विचारणीय है कि राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पटरी पर कैसे रह पायेगी। कृषि का उचित तरीके से विकास हो इसके लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

किसानों को न्यूनतम ब्याज पर कृषि ऋण देना
सभी कृषकों को किसी भी फसल को उगाने के लिए ऋण उपलब्ध होना चाहिए। सभी किसानों को 4 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से दीर्घकालिक ऋण बैंकों से उपलब्ध कराया जाये। सरकार द्वारा अनेक प्राकृतिक आपदाओं (सूखा, बाढ़, पाला, अतिवृष्टि, अल्पवृष्टि इत्यादि) की स्थिति में फंड की व्यवस्था करनी चाहिए।

भू–भक्षरण को रोकना : भू–क्षरण के द्वारा मृदा की ऊपरी उपजाऊ पर्त, पानी द्वारा नष्ट हो जाती है जिससे मृदा–उर्वरता कम होने के कारण फसलों की पैदावार कम हो जाती है। इसको रोकने के लिए सही फसल चक्र को अपनाया जाना, कार्बनिक खादों का अधिक प्रयोग, खेतों का समतलीकरण, ढाल के विपरीत जुताई व बुवाई करना, मल्चिंग, वनीकरण, पट्टीदार खेती आदि अपनाकर मृदा के क्षरण होने से बचाकर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

फसलों में कार्बनिक खादों का अधिक मात्रा में प्रयोग :
वर्तमान में कृषि फसलों का उत्पादन घटने का प्रमुख कारण भूमि में कार्बनिक खादों का प्रयोग कम या न करना है कार्बनिक खादों के प्रयोग न होने से मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा में कमी तथा असंतुलन हो जाता है।

स्वस्थ मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा –

जीवांश कार्बन	0.8 प्रतिशत
भूमि का सी/एन अनुपात	10:1 प्रतिशत
फास्फोरस P_2O_5	40 Kg/ha से अधिक
पोटाश K_2O	250
Mn	4
Zn	1.2
Fe	8.0 पीपीएम से अधिक
Cu	0.4
S	15

मृदा का स्वास्थ्य खराब होने से मृदा में पाये जाने वाले विभिन्न सूक्ष्म जीवों की संख्या में भारी कमी आई है। ये सूक्ष्म–जीव भूमि को भुरभुरी एवं छिद्रयुक्त बनाने के साथ–साथ पौधों को अनेक आवश्यक पोषक तत्वों को भी उपलब्ध कराते हैं।

उचित फसल–चक्रों का प्रयोग : मृदा उत्पादकता को बढ़ाने के लिए फसल चक्र के सिद्धान्तों को अपनाना आवश्यक है, जिससे किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित समय में फसलों की पैदावार में वृद्धि हो।

उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग : फसलों से अच्छी पैदावार के लेने के लिए तथा अपनी मृदा के स्वास्थ्य को उत्तम बनाये रखने के लिए फसलों में उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करना आवश्यक है। उर्वरकों के संतुलित प्रयोग करने के लिए मृदा परीक्षण का महत्वपूर्ण योगदान है। फसलों की अच्छी पैदावार लेने के लिए 17 पोषक तत्व माने गये हैं। इन पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु उपयुक्त कार्बनिक एवं रासायनिक उर्वरकों की मात्रा को संस्तुत किया गया है, जिससे मृदा स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

रेन वाटर हार्वेस्टिंग : अच्छे उत्पादन के लिए पानी की आवश्यकता होती है, परन्तु वर्तमान में दिन–प्रतिदिन भू–जल स्तर नीचे गिर रहा है। सिंचाई के लिए नहरों द्वारा भी समुचित मात्रा में पानी की उपलब्धता नहीं की जा रही है। अतः रेन वाटर हार्वेस्टिंग तकनीकी को अपनाया जाना चाहिए जिसके द्वारा वर्षा जल को बोरिंग करके भूमि के अंदर ऐसे स्ट्रेटा में डाल दिया जाता है, जिससे भू–जल स्तर ऊपर को उठता है। साथ ही सिंचाई हेतु ड्रिप सिंचाई, फुव्वारी सिंचाई पद्धतियों को अपनाया जाये जिससे लगभग 40 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत होगी।

बारानी क्षेत्रों में सहफसली खेती का प्रयोग : देश में लगभग 60 प्रतिशत बारानी (शुष्क जमीन) खेती होती है। बारानी क्षेत्रों में दलहनी तथा तिलहनी की सहफसली खेती पद्धति में कम पानी, कम खाद एवं उर्वरक तथा कम लागत की आवश्यकता होती है।

विभिन्न फसलों के लिए इन्टरक्रॉपिंग अनुपात

गेहूँ – सरसों (9:1 कतार अनुपात)
गेहूँ – चना (4:1)
ज्वार – अरहर (4:1)
कपास– अरहर (6:2)

उपरोक्त सुझावों को यदि अपनाया जाये, तो निःसंदेह जो किसान खेती कर रहे हैं और वित्तीय संकट एवं मौसम आपदाओं से आत्महत्या हेतु मजबूर हो जाते हैं, उन्हें इससे छुटकारा मिल सकता है। साथ ही साथ देश की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो सकता है। अंततः आज जरूरत इस बात की है कि कृषि को प्राथमिकता देनी होगी। तभी हम भारतीय कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को देश की महाशक्ति बनाने की आधारशिला को खड़ा कर पायेगें।

पृष्ठ सं० 08––का शेष

उबालें। यह बिल्वसिद्ध तेल प्रतिदिन 4–4 बूँद कान में डालने से कान के दर्द तथा बहरेपन में लाभ होता है।

(8) उलटी: बेलफल के गूदे का 30 से 50 मि.ली. काढ़ा शहद मिलाकर पीने से त्रिदोशजन्य उलटी में आराम मिलता है।

गर्भवती स्त्रियों को उलटी व अतिसार होने पर कच्चे बेलफल के 20 से 50 मि.ली. काढ़े में सत्तू मिला के देने से राहत मिलती है।

बार–बार उलटियाँ होने पर अथवा किसी भी चिकित्सा से उलटी में राहत न मिलने पर बेलफल के गूदे का पाँच ग्राम चूर्ण चावल के धोवन के साथ लेने से आराम मिलता है, साथ ही यह संग्रहणी, प्रवाहिका व अतिसार में भी लाभकारी होता है।

(9) पाचन–रोगः पके हुए बेलफल का गूदा निकालकर उसे छाया में सुखा लें। फिर पीसकर चूर्ण बनायें। इस चूर्ण को छः महीने तक ही प्रयोग में लाया जा सकता है। इसमें पाचकतत्व पूर्ण रूप से समाविष्ट होते हैं। आवश्यकता पड़ने पर 2 से 5 ग्राम चूर्ण पानी में मिलाकर सेवन कर सकते है।

जो धर्म में दृढ़ रहता, वह जीवन पाता है, परन्तु जो बुराई का पीछा करता, वह मृत्यु का कौर हो जाता है।

नीतिवचन 11:19

शरीर शुद्धिकर फल: नींबू

शिखा कुमारी
शोध छात्रा
एथिलिण्ड स्कूल ऑफ होम सांइस
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं
विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रो0 (डॉ0) सरिता शेख
प्रवक्ता
एथिलिण्ड स्कूल ऑफ होम सांइस
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

नींबू अनुष्ण अर्थात् न अति उष्ण है, न अति शीत। यह उत्तम जठराग्निवर्धक, पित्त व वातशामक, रक्त, हृदय व यकृत की शुद्धि करने वाला, कृमिनाशक तथा पेट के लिए हितकारी है। हृदय रोगों को ठीक करने में यह अंगूर से भी अधिक गुणकारी सिद्ध हुआ है। इसमें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध विटामिन 'सी' शरीर की रोगप्रतिकारक शक्ति को बढ़ाता है।

आधुनिक खानपान, मानसिक तनाव एवचं प्रदूषित वातावरण से शरीर में सामान्य मात्रा से कहीं अधिक अम्ल (एसिड) उत्पन्न होता है, जिसके शरीर पर होने वाले परिणाम अत्यंत घातक हैं। यह अतिरिक्त अम्ल कोशिकाओं को क्षति पहुँचाकर अकाल वार्धक्य व धातुक्षयजन्य रोग (degenerative diseases) उत्पन्न करता है।

नींबू स्वाद में अम्ल है परंतु पाचन के उपरांत इसका प्रभाव मधुर हो जाता है। यह माधुर्य अम्लता को आसानी से नष्ट कर देता है। एक गिलास गर्म पानी में एक नींबू व 25 तुलसी के पत्तों का रस मिला के हफ्ते में 2 से 4 दिन पीने से शरीर में संचित विषाक्त द्रव्य, हानिकारक जीवाणु व अतिरिक्त चर्बी नष्ट होकर कई गम्भीर रोगों से रक्षा होती है।

डॉ. रेड्डी मेलर के अनुसार *'कुछ दिन ही नींबू का सेवन रक्त को शुद्ध करने में अत्यधिक मदद करता है। शुद्ध रक्त शरीर को खूब स्फूर्ति व मांसपेशियों को नयी ताकत देता है।'*

औषधीय प्रयोग

(1) **अम्लपित्त (एसिडिटी):** नींबू–पानी में मिश्री व सेंधा नमक मिला के पीने से अम्लपित्त में राहत मिलती है। रोग पुराना हो तो गुनगुने पानी में 1 नींबू निचोड़कर सुबह खाली पेट कुछ दिनों तक नियमित लेना चाहिए।

(2) **पेट की गड़बड़ियाँ:** भोजन से पूर्व नींबू, अदरक व सेंधा नमक का उपयोग अरूचि, भूख की कमी, गैस, कब्ज, उलटी व पेटदर्द में लाभदायी है।

(3) **यूरिक एसिड की वृद्धि:** राजमा, उड़द, पनीर जैसे अधिक प्रोटीनयुक्त पदार्थो का अति सेवन करने से शरीर में यूरिक एसिड की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे जोड़ों में खासकर एड़ी में दर्द होने लगता है। सुबह खाली पेट गुनगुने पानी में नींबू का रस लेने से यह रूरिक एसिड पेशाब के द्वारा निकल जाता है। इसमें नींबू की आधी मात्रा में अदरक का रस मिलाना विशेष लाभदायी है।

(4) **मुँह के रोग:** नींबू मुँह में कीटाणुओं की वृद्धि को रोकता है। भोजन के बाद नींबू–पानी से कुल्ला करने से मुँह की दुर्गंध ठीक हो जाती है।
विटामिन 'सी' की कमी से होने वाले स्कर्वी रोग में मसूड़ों से खून आने लगता है, दाँत हिलने लगते हैं। कुछ दिनों तक नींबू के सेवन से व एक नींबू के रस को एक कटोरी पानी में मिलाकर कुल्ले करने से इसमें लाभ होता है। नींबू का छिलका मसूड़ों पर घिसने से मसूड़ों से मवाद आना बंद हो जाता है।

(5) **पेशाब की जलन:** मिश्रीयुक्त नींबू–पानी उपयुक्त है।

(6) **हैजा:** नींबू का रस हैजे के कीटाणुओं को शीघ्रता से नष्ट करता है।
उपवास के दिन गुनगुने पानी में नींबू का रस व शहद मिला के पीने से शरीर की शुद्धि होकर स्फूर्ति आती है।

"जीरो टिलेज अपनायें एवं पछेती गेहूँ का उत्पादन बढ़ायें"

डॉ0 शिशिर कुमार
विषय वस्तु विशेषज्ञ
प्रसार निदेशालय, सैम हिग्गिनबॉटम
कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 राजकुमार यादव
प्राध्यापक (शस्य विज्ञान)
सी.बी.गुप्ता कृषि महाविद्यालय
बख्शी का तालाब, लखनऊ

डॉ0 संजय कुमार
प्राध्यापक (शस्य विज्ञान)
जी.सिंह कृषि महाविद्यालय
सहसों, इलाहाबाद

उत्तर प्रदेश में प्रचलित धान–गेहूँ फसल चक्र में विशेषतः गेहूँ की बुवाई में अक्सर विलम्ब हो जाता है। धान की फसल कटाई देर से होने से गेहूँ की फसल की बुवाई हेतु खेत की तैयारी के लिए समय नहीं बचता और अंततः खेत खाली छोड़ने के अलावा किसान भाइयों के पास कोई दूसरा विकल्प नहीं रहता। पछेती बुवाई करने पर उत्पादन अत्यधिक कम प्राप्त होता है। किसान भाइयों की इस समस्या को ध्यान में रखते हुए पंतनगर कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय द्वारा एक ट्रैक्टर चालित जीरो टिलेज सीड ड्रिल मशीन विकसित की गयी है। धान की कटाई करने के बाद इस मशीन द्वारा गेहूँ की बुवाई खेत की बिना जुताई किये आसानी से की जा सकती है एवं इससे उत्पादन भी अच्छा प्राप्त होता है।

जीरो टिलेज तकनीकी

धान की फसल की कटाई उपरांत उसी खेत में बिना कोई जुताई किये हुए जीरो टिलेज सीड ड्रिल मशीन द्वारा गेहूँ की बुवाई करना जीरो टिलेज तकनीक कहलाता है। सामान्यतः कृषक भाइयों का ऐसा विश्वास है कि गेहूँ की फसल की अच्छी पैदावार लेने हेतु खेत की 5–6 जुताई करना आवश्यक है। किन्तु वैज्ञानिक अनुभव बताते हैं कि अधिक जुताई से पैदावार में वृद्धि नहीं होती बल्कि खर्च ही अधिक होता है। अतः जीरो टिलेज तकनीक की सहायता से खेत की तैयारी पर होने वाली लागत की बचत एवं समय से गेहूँ की बुवाई सुनिश्चित की जा सकती है। परम्परागत बुवाई की तुलना में जीरो टिलेज सीड ड्रिल से बुवाई करने पर खेत की तैयारी में लगने वाले 10–15 दिनों की बचत कर समय से बुवाई की जा सकती है एवं उत्पादन स्थिर रखा जा सकता है।

जीरो टिलेज सीड ड्रिल की बनावट

जीरो टिलेज सीड ड्रिल 9 या 11 लाइनों वाली एक मशीन होती है जिसमें मुख्य ढाँचा, बीज व खाद का बॉक्स, उर्वरक व बीज नापने का यन्त्र, कूँड़ बनाने का फाल आदि मुख्य भाग होते हैं। इस मशीन में एक खुदाई करने वाली डिस्क भी लगी होती है। इसमें उलटे आकार की 9 व 11 फाल लगे होते हैं, किसान भाई इनके बीच की दूरी को आवश्यकतानुसार घटा बढ़ा सकते हैं। यंत्र को चलाने पर फाल के द्वारा उलटे टी आकार के कूँड़ में बाक्स से नली के द्वारा बीज आकर गिरते हैं। चालक पहिए, चेन व स्प्रोकेट के माध्यम से उर्वरक व बीज को शाफ्ट की गति मिलती है, जिनसे फ्लूटेड रोलर चलने लगते हैं।
इसके खाँचों में फँसे बीज बॉक्स से लगातार नीचे गिरते रहते हैं और नली में पहुँच जाते हैं। जीरो टिलेज सीड ड्रिल मशीन को 35–45 अश्व शक्ति वाले ट्रैक्टर से आसानी से चलाया जा सकता है। 9 कतार वाली जीरो टिलेज सीड ड्रिल से एक घण्टे में 0.35–0.40 हैक्टर खेत की बुवाई की जा सकती है।

जीरो टिलेज सीड ड्रिल से बुवाई

धान की कटाई के बाद खेत में जब उचित ओट आ जाये तब जीरो टिलेज मशीन का प्रयोग गेहूँ की बुवाई हेतु किया जा सकता है। देर से धान की कटाई के समय खेत में नमी कम होने की संभावना होने पर कटाई के एक सप्ताह पहले धान के खेत की हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए, जिससे कटाई के तुरन्त बाद बुवाई की जा सके। इससे बुवाई सामान्य बुवाई की अपेक्षा एक सप्ताह पूर्व की जा सकती है। इस मशीन में 2 बॉक्स लगे होते हैं। अगले बाक्स में उर्वरक व पिछले बॉक्स में बीज भरने चाहिए। ट्रैक्टर द्वारा मशीन चलाने पर उर्वरक व बीज फरो ओपनर द्वारा बनाये कूँड़ में गिरते रहते हैं। इस प्रकार उर्वरक नीचे व बीज उसके ऊपर एक कूँड़ में गिरते हैं। इससे कूँड़ में बीज का जमाव परम्परागत विधि की तुलना में 3–4 दिन पहले होता है। समय से बुवाई करने पर बीज की मात्रा 100 किग्रा./हेक्टेयर तथा विलम्ब से बुवाई की दशा में बीज की मात्रा 125 किग्रा./हेक्टेयर रखनी चाहिये।

उन्नतशील प्रजातियाँ

जीरो टिलेज तकनीक द्वारा गेहूँ की देर से बुवाई के लिए एच.डी.–2643, एच.डी.–2932, डी.बी.डब्लू–373, नरेन्द्र गेहूँ–2036, राज–3765, राज–3777, डी.बी. डब्लू–16, यू.पी.–2425, नरेन्द्र गेहूँ–1014 आदि प्रजातियों का चयन करना चाहिये।

गेहूँ की बुवाई यदि 25 नवम्बर के बाद की जाये तो अपेक्षाकृत कम उपज प्राप्त होती है। ऐसी स्थिति में विलम्ब से बुवाई के लिए संस्तुत की गयी प्रजातियों की ही बुवाई करनी चाहिए। बुवाई से पूर्व बीज का शोधन कार्बेन्डाजिम अथवा थीरम से 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से कर लेना चाहिये। जीरो टिलेज मशीन द्वारा विलम्ब से बुवाई करने पर सामान्य उर्वरकों की मात्रा घटाकर नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश क्रमशः 80:40:30 किग्रा./हेक्टेयर रखनी चाहिये।

जीरो टिलेज सीड ड्रिल के लाभ

- खेत की तैयारी के समय को बचाकर 10–15 दिन पहले बुवाई की जा सकती है।
- समय से बुवाई करने पर अच्छी पैदावार मिल जाती है और 85–90 प्रतिशत ईधन, ऊर्जा व समय की बचत होती है।
- पौधों की उचित संख्या तथा उर्वरक का सर्वश्रेष्ठ उपयोग संभव हो पाता है।
- पहली सिंचाई में पानी न लगने के कारण फसल वृद्धि में रूकावट की समस्या नही रहती है।
- गेहूँ के प्रमुख खरपतवार–गेहूँ सा का प्रकोप 30 फीसदी तक कम होता है।
- निचली भूमियों में, नहर के किनारे की भूमि में इस मशीन द्वारा समय से बुवाई की जा सकती है।
- इस विधि से बुवाई करने पर 15–20 फीसदी पानी की बचत होती है।
- इस तकनीक से बुवाई करते समय पाटा लगाने की आवश्यकता नही पड़ती।

जीरो टिलेज तकनीक में ध्यान रखने योग्य बातें

- बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- धान की कटाई करते समय ध्यान रखें कि डंठल 10–15 सेमी. से ज्यादा बड़े न हो नही तो ड्रिल मशीन को चलाने में अवरोध उत्पन्न करते हैं।
- बीज दर 125 किग्रा. प्रति हैक्टर प्रयोग करनी चाहिये।
- दानेदार उर्वरकों (एन.पी.के.) का प्रयोग ही मशीन में करना चाहिए।
- उर्वरकों की मात्रा नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश क्रमशः 80:40:30 किग्रा./हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिये।
- बुवाई शुरू करने से पहले मशीन यंत्रों को अच्छी तरह समायोजित कर लेना चाहिए, जिससे उर्वरक व बीज की सही मात्रा खेत में प्रयोग हो सकें।
- पहली सिंचाई बुवाई के 18–20 दिन पर करनी चाहिए तथा बाद की सिंचाई 20–25 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिये।
- खरपतवारों के नियंत्रण हेतु सल्फोसल्फ्यूरान 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 33 ग्राम/हेक्टेयर की दर से 600–800 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के 25–30 दिन पर छिड़काव करना चाहिये।

खाद एवं उर्वरक फसलों के लिए आवश्यक एवं इनकी कमी के लक्षण

डॉ0 मनीष केसरवानी
विषय वस्तु विशेषज्ञ
निदेशक प्रसार
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रो0 (डॉ0) विल्सन किस्पोटा
निदेशक प्रसार
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी
एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता :
पौधे अपने भोजन का अधिकांश भाग जड़ों द्वारा भूमि से ग्रहण करते हैं भूमि पौधों के भोजन भण्डार तो हैं, लेकिन बार–बार फसल उगाने पर उसमें पौधों के लिए आवश्यक कुछ पोषक–तत्वों की कमी हो जाती है। जिसे वह इतना शीघ्र उपलब्ध नहीं करा पाती जितना शीघ्र वह पौधों द्वारा भोजन के रूप में भूमि से लिये जाते हैं। इस प्रकार भूमि को किसी स्रोत से वे पोषक तत्व न मिले तो एकी खेत में बार–बार फसल उगाने के फलस्वरूप वह भूमि अपनी उर्वरता खो बैठती है और उसमें उगाई जाने वाली फसलों की उपज उत्तरोत्तर घटने लगती है । अतः भूमि में पौधों के इन पोषक तत्वों की कमी को पूरा कर उसकी उर्वरता बनाये रखने अथवा बढ़ाने के लिए हम भूमि में खाद अथवा उर्वरक मिलाते हैं। वे सब पदार्थ जो भूमि में मिलाये जाने पर उसकी उर्वरता को बढ़ाते हैं खाद या उर्वरक कहलाते हैं। खाद एवं उर्वरक निम्नलिखित में से किसी एक अथवा अधिक ढंगों द्वारा भूमि की उर्वरता बढ़ाते हैं।

1. **भूमि में पौध के विभिन्न तत्वों की मात्रा में वृद्धि करके :** नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश अथवा अन्य किसी ऐसे पोषक तत्व मिलाने पर जिसकी भूमि में कमी होती है। भूमि की उर्वरता में सुधार होता है।
2. **भूमि की भौतिक दशा में सुधार करके :** भूमि की भौतिक दशा सुधारने पर अथवा उसमें उपस्थित बुराइयां दूर होने पर भूमि में उपस्थित पोषक तत्व पौधों के लिए अधिक सुलभ हो जाते हैं।
3. **भूमि की जल धारण क्षमता में वृद्धि करके :** पर्याप्त नमी उपलब्ध होने पर ही पौधे भूमि में उपस्थित पोषक तत्वों का ठीक प्रकार से उपयोग कर पाते हैं।
4. **भूमि में जैव पदार्थों को उपलब्ध करके :** पर्याप्त मात्रा में जैव पदार्थ उपलब्ध होने पर भूमि में उपस्थित सूक्ष्म जीव अपना कार्य भली–भांति करने लगते हैं और भूमि की उर्वरता में वृद्धि करते हैं । जैव पदार्थ के विघटन से भी लगभग सभी पोषक तत्व उपलब्ध होते रहते हैं।

मृदा में मिलाये जाने वाले विभिन्न पदार्थो के नाम जो कि उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं ।

1. **उर्वरक :** इनमें पौधे के पोषक तत्वों की प्रतिशत मात्रा तो अधिक होती है, लेकिन इनमें जैव पदार्थ नहीं होता, जैसे अमोनियम सल्फेट, यूरिया, डाई अमोनियम फास्फेट, पोटैशियम क्लोराइड इत्यादि।
2. **खाद :** इनमें पौधे के पोषक तत्वों की प्रतिशत मात्रा तो अपेक्षाकृत कम होती है, लेकिन इनमें जैव पदार्थ की अधिकता होती है, जैसे–गोबर की खाद कम्पोस्ट इत्यादि। इनमें लगभग सभी पोषक तत्व थोड़ी–थोड़ी मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं।
3. **भूमि संशोधक :** ये वे पदार्थ हैं जो कि दोषपूर्ण भूमि को सुधार कर फसल उत्पादन में वृद्धि करते हैं, जैसे–चूना, जिप्सम, पायराइट इत्यादि।

पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषाहार : मनुष्यों, जानवरों और अन्य जीव जन्तु की तरह पेड़–पौधों को अपनी वृद्धि और विकास के लिए भोजन की

आवश्यकता होती है। पौधों को भोजन विभिन्न पोषक तत्वों से युक्त होता है पौधे अपना भोजन मुख्य रूप से हवा, पानी तथा भूमि से प्राप्त करते हैं। भूमि से पौधे भोजन के आवश्यक तत्वों को घोल के रूप में ग्रहण करते हैं।

पौधों को अपनी पोषण के लिए 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इन पोषक तत्वों की आपूर्ति के बिना पौधे अपनी वृद्धि एवं विकास अवस्थाओं को पूर्ण नहीं कर सकता है। इसीलिए ये तत्व आवश्यक तत्व कहलाते हैं। 16 तत्वों के अतिरिक्त 4 तत्व पौधों पर लाभदायक इन 4 तत्वों Criteria of essentiality की कमी पौधों पर बुरा प्रभाव डाल रही है और फसल/उपज में कमी होती जा रही है।

वैज्ञानिक आरनोन ने तत्वों की अनिवार्यता की कसौटी के निम्नलिखित मानदण्ड दिया है।

1. आवश्यक तत्वों के अभाव में पौधे अपना जीवन चक्र पूरा नहीं कर सकते हैं।
2. किसी विशेष आवश्यक तत्व की कमी को केवल उसी तत्व को प्रदान करके दूर किया जा सकता है, अर्थात एक आवश्यक तत्व की कमी दूसरे तत्व से पूरी नहीं की जा सकती है।
3. आवश्यक तत्व प्रत्यक्ष रूप से पौधों को भोजन में या यचापयच क्रियाओं में भाग लेते हैं।

तालिका : 1 पौधों के लिए आवश्यक तत्व तथा उनके स्रोत :

पौधों के लिए आवश्यक तत्व जिनकी अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। बहु मात्रिक तत्व		वे तत्व जिनकी सूक्ष्म मात्रा में आवश्यकता होती है। सूक्ष्म मात्रिक तत्व
हवा तथा पानी द्वारा	भूमि से मिलते हैं	भूमि से मिलते हैं
1. कार्बन	1. नत्रजन	1. लोहा
2. हाइड्रोजन	2. फास्फोरस	2. मैंग्नीज
3. आक्सीजन	3. पोटाश	3. जस्ता
	4. कैल्शियम	4. बोरॉन
	5. मैग्नीशियम	5. तांबा
	6. सल्फर	6. मालिब्डेनम
		7. क्लोरीन
		8. कोबाल्ट
		9. सोडियम
		10. बेनेडियम
		11. सिलिकॉन

पौधे का 94 से 99.5 प्रतिशत भाग कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन के द्वारा बनता है तथा 0.5 प्रतिशत से 4–6 प्रतिशत भाग मृदा अवयवों से बनता है। इसके बावजूद जो पोषक तत्व मृदा से लिए जाते हैं, उनकी कमी होने पर पौधों की वृद्धि सीमित हो जाती है।

कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन तत्व पौधा हवा व जल से प्राप्त करता है। बचे हुए शेष 17 और तत्वों को पौधा मृदा व खादों से प्राप्त करता है। भूमि से प्राप्त किए गये पोषक तत्वों नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्सियम, मैग्नीशियम और सल्फर की पौधों द्वारा अपेक्षाकृत अधिक मात्रा प्रयोग की जाती है। इसलिए इन तत्वों को बहुमात्रिक तत्व कहते हैं। नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है, साथ ही विश्व की अधिकांश भूमियों में इन तीन तत्वों की कमी पाई जाती है। इसलिए इन तीन तत्वों की कमी पाई जाती है। इसलिए इन तीन तत्वों को मुख्य तत्व कहते हैं। चूंकि ये तत्व मृदा में खाद और उर्वरकों द्वारा दिए जाते हैं। इसलिए इन तत्वों को उर्वरक तत्व भी कहते हैं।

कैल्शियम, मैग्नीशियम और सल्फर भी पौधों को पर्याप्त मात्रा में चाहिए, लेकिन इनका कार्य मुख्य पोषक तत्वों से कम माना जाता है। साथ ही उत्पादक मुख्य पोषक तत्वों की तुलना में कम महत्व देते हैं तथा नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की तुलना में इनकी पौधों को कम आवश्यकता होती है। इसलिए इन तत्वों को गौण तत्व कहते हैं। अम्लीय भूमियों में कैल्शियम और मैग्नीशियम चूना पत्थर के रूप में दिए जाते हैं। इसलिए कैल्शियम और मैग्नीश्यिम को चूना तत्व भी कहते हैं। शेष सात तत्वों लोहा, मैग्नीज, जस्ता, बोरान, तांबा, मालिब्डेनम और क्लोरीन की पौधों को बहुत ही कम मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। इसलिए इन तत्वों को सूक्ष्म मात्रिक तत्व या न्यून तत्व या विरल तत्व कहते हैं। इन तत्वों की आपूर्ति कोई विशेष समस्या नहीं है, कमी होने पर पौधों को इन तत्वों को देना होगा क्योंकि ये भी आवश्यक तत्व हैं। कोबाल्ट, सोडियम, वैनेडियम और सिलिकान का प्रभाव पौधों पर पड़ता है। परन्तु ये आवश्यक तत्व नहीं है क्योंकि सभी फसलों के लिए ये आवश्यक नहीं है।

मृदा में पोषक तत्वों के प्राप्त होने के स्रोत :

1. **फसल के अवशेष से :** फसल की पत्तियों, तना व जड़ के अवशेष के सड़ने से भूमि को पोषक तत्व प्राप्त होते रहते हैं।
2. **खाद द्वारा :** खेत में कार्बनिक व अकार्बनिक खाद देने पर पोषक तत्व मृदा में पहुंचते रहते हैं।
3. **भूमि सुधारकों द्वारा :** जिप्सम, चूना, पाइराइट, पैरसमड, लकड़ी का बुरादा आदि भूमि सुधारकों द्वारा भी पोषक तत्व भूमि में पहुंचते हैं।
4. **खरपतवारनाशी तथा फफूंदी नाशकों द्वारा :** इन रसायनों के खेत में छिड़कने पर कुछ पोषक तत्व भूमि में पहुंच जाते हैं।
5. **वर्षा द्वारा :** जब वर्षा होती है तो वायुमण्डलीय नत्रजन पानी में घुलकर भूमि में पहुंच जाती है।
6. **दलहनी फसलों द्वारा :** दलहनी फसलों की जड़ों में छोटी–छोटी ग्रन्थियां पाई जाती हैं। इनमें उपस्थित राइजोबियम जीवाणु वायमण्डली से नत्रजन लेकर ग्रन्थियों में स्थापित करते हैं। इसे नत्रजन यौगिकीकरण क्रिया कहते हैं।
7. **एजोक्टोबैक्टर व क्लास्ट्रीडियम असहजीवी जीवाणु :** भी हवा की नत्रजन का भूमि में यौगिकीकरण करते हैं।
8. **विभिन्न रसायनिक यौगिकों द्वारा सूक्ष्म तत्व भूमि से लिये जाते हैं :** जैसे बोरान के लिए बोरैक्स, जिंक के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीज के लिए मैग्नीज सल्फेट आदि दिए जाते हैं। कैल्शियम के लिए चूना, जिप्सम, सल्फर के लिए, पाइराइटस या कैल्शियम पोली सल्फाइड, मैग्नीशियम के लिए मैग्नीशियम सल्फेट या डोलोमाइट, लोहे के लिए फैरस सल्फेट आदि दिए जा सकते हैं।

मुख्य पोषक तत्वों के कार्य एवं कमी के लक्षण

नत्रजन :

1. नत्रजन, प्रोटीन और क्लोरोफिल का आवश्यक अवयव है। इसके अतिरिक्त नत्रजन न्यूकिलिक अम्ल, हार्मोंस, विटामिन्स एमाइडस, एलकोलाइडस, अमीनों अम्ल तथा प्रोटोप्लाजम को संरचना में सक्रिय भाग लेता है। यह जीवन का मूल अवयव है।
2. नत्रजन एडिनोसिन ट्राइफास्फट का मुख्य अवयव है। पौधों में आक्सिन का बनना नत्रजन की मात्रा से उत्प्रेरित होता है।
3. पौधों में नत्रजन नियंत्रक का कार्य करती है। इससे फास्फोरस व पोटेशियम का विनिमय भी संतुलित रहता है। नत्रजन से स्टार्च के बल विश्लेषण में मदद मिलती है।
4. पौधों में गहरा हरा रंग प्रदान करता है क्योंकि क्लोरोफिल का मुख्य अवयव है।
5. पौधों को शीघ्र व ओजस्वी वानस्पतिक वृद्धि में सहायता करता है तथा कल्ले अधिक निकलते हैं ।
6. पत्तादार सब्जियों तथा चारे वाली फसलों की गुणवत्ता, रस तथा गूदे को बढ़ाता है।
7. यह पौधों की फास्फोरस, पोटेशियम और कैल्सियम को शोधित करने की क्षमता बढ़ाता है।
8. नत्रजन के घोल को फसल में देने/लगाने पर फसल देर से पकती है।
9. नत्रजन की अधिक मात्रा देने पर फसल गिर सकती है तथा दाने की अपेक्षा भूसे की मात्रा बढ़ जाती है। रोग व कीटों के आक्रमण की सम्भावना बढ़ जाती है।
10. दानों तथा चारों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाती है।

पौधों में नत्रजन की कमी के लक्षण :

1. नत्रजन की कमी होने पर पौधों की वषद्धि रूक जाती है। पौधे छोटे रह जाते हैं तथा जड़ों की वृद्धि भी सीमित रह जाती है।
2. पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। फसल हल्की पीली या हरी दिखाई देती है।
3. दाने वाली फसलों जैसे मक्का, ज्वार, गेंहू आदि में नीचे वाली पत्तियां पीली पड़ना शुरू होकर बाद में पौधे के ऊपर वाले भागों की भी पत्तियां पीली पड़ने लगती है। पत्ती शीर्ष से पीली पड़कर आगे मध्य सिरे के साथ पीली पड़कर सूखती है और इस प्रकार V के आकार का भाग पीला पड़कर सूख जाता है।
4. कल्ले निकलने वाली फसलों जैसे गेहॅूं, जौ, धान में नत्रजन की कमी से कल्ले बहुत कम निकलते हैं।
5. अधिक कमी से फूल कम आते हैं और उपज कम हो जाती है। दाने सिकुड़ भी जाते हैं।

फास्फोरस : नत्रजन के समान फास्फोरस भी पौधों के लिए आवश्यक तत्व है जिसकी हमारे देश की भूमि में प्रायः कमी पाई जाती है। फास्फोरस की सबसे बड़ी समस्या उसकी प्राप्ति या उपलब्धता की है। फास्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा का केवल 1/3 भाग ही पौधों को उपलब्ध हो पाता है। फास्फोरस का ज्यादातर भाग अप्राप्त अवस्था में भूमि में विद्यमान रहता है, जो पौधों को तुरन्त लाभ नहीं पहुंचा सकता। भूमि में फास्फोरस को उपलब्धता को कम कर देती है। फास्फोरस की यौगिकीकरण क्रिया से उपलब्ध फास्फोरस अनुपलब्ध फास्फोरस में परिवर्तित हो जाता है जिसका उपयोग पौधे नहीं कर सकते। एक औसत कृषि योग्य मृदा में लगभग 0.1 प्रतिशत कुल फास्फोरस होता है। अलीगढ़ की मृदा में 0.13 प्रतिशत कानपुर की मृदा में 0.22 प्रतिशत, बनारस की मृदा में 0.09 फास्फोरस पाया जाता है। पौधे फास्फोरस को आर्थोफास्फेट आयन्स H_2PO_4, HPO_4 के रूप में ग्रहण करते हैं।

पौधों में फास्फोरस के कार्य :

1. यह फास्फोरस, फाइटिन, फास्फोलिपाइडस तथा न्यूकिल्क अम्ल का आवश्यक अवयव है।
2. ऊर्जा के सीानान्तरण में फास्फोरस महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है तथा वसा और प्रोटीन उपापचय में हाथ बंटाता है।
3. फास्फोरस ऊतकों के श्वसन में भी सहायक होता है। यह आक्सीडेज एन्जाइम्स की क्रियाशीलता को प्रभावित करता है। फास्फोरस अधिकांश एन्जाइम का आवश्यक अवयव है।
4. यह नत्रजन के हानिकारक प्रभावों को कम या उदासीन करता है।
5. जड़ों की अच्छी वृद्धि करता है। पौधों की शीघ्र व ओजस्वी वृद्धि प्रात्साहित करता है।
6. पौधों में फूलों व फलों की संख्या बढ़ जाती है।
7. इसके प्रयोग से पौधों में फूल शीघ्र आते हैं तथा दानों के निर्माण में सहायता प्रदान करता है तथा फसलों को शीघ्र पकाता है। फसल को गिरने से रोकता है।
8. दानों को मोटा तथा चमकीला बनाता है। जिससे उपज में वृद्धि होती है।
9. फास्फोरस प्रदान करने वाले उर्वरक लगाने से दाने व भूसे का अनुपात बढ़ जाता है।
10. दलहनी फसलों को जड़ों में स्थित ग्रन्थियों की संख्या तथा आकार में वृद्धि करता है। जिसके फलस्वरूप अधिक वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण होता है।
11. फास्फोरस अनाज व अन्य फसलों की गुणवत्ता बढ़ाता है।
12. कुछ रोगों में प्रति पौधों में प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करता है तथा पौधों में मजबूती प्रदान करता है । साथ ही सूखा प्रतिरोधी तथा शीत प्रतिरोधी शक्ति बढ़ाता है।

फास्फोरस की कमी के लक्षण

1. पौधों की जड़ों का विकास बहुत कम होता है।
2. मन्द वृद्धि तथा फसल देर से पकती है। दलहनी फसल बौनी रह जाती है।
3. पत्तियों का लालिमायुक्त बैंगनी रंग दिखाई देता है या पत्तियां असामान्य गहरे नीले, हरे रंग की हो जाती है।
4. धान, गेहूं, ज्वार आदि फसलों में तना छोटा, पतला, कल्लों की संख्या कम, पत्तियां नीली हरी या हल्की गुलाबी पत्तियों का गिरना फलों और फली की संख्या कम होना फास्फोरस की कमी के लक्षण हैं।
5. फूल या फल कम लगते हैं तथा इनका आकार छोटा हो जाता है।
6. दाने व भूसे का अनुपात कम हो जाता है।

पोटैशियम : अधिकांश भारतीय भूमियों में पोटैशियम की मात्रा लगभग 2.5 प्रतिशत पाई जाती है। इस प्रकार पोटाश मृदा में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। औसतन इसकी मात्रा प्रति हे0 800 से 1000 किग्रा है। लेकिन भूमि में एकत्रित पोटैशियम का अधिकांश भाग पौधों को तुरन्त लाभ पहुंचाने की स्थिति में नहीं होता है क्योंकि मृदा का अधिकांश पोटैशियम स्थिर रूप में होता है। कुछ सीमित क्षेत्रों में इसकी कमी भी अनुभव की गई है। उत्तर प्रदेश की जलोढ़ मृदाओं में पोटैशियम की मात्रा 0.81 से 1.0 प्रतिशत होती है। बिहार की लैटेराइट मृदा में 0.01 प्रतिशत तथा कपास की काली मृदाओं में पोटैशियम की मात्रा 0.25 से 0.35 प्रतिशत होती है। पौधे पोटैशियम को पोटैशियम आयन के रूप में ग्रहण करते हैं।

पोटाश का प्रभाव : पोटाश फसल को कीड़ों और बीमारियों से सुरक्षा प्रदान करता है। पोटाश जहां एक और पौधे के भोजन के काम आता है, वहीं दूसरी ओर कीड़े और मकौड़ों से फसल की रक्षा करके सहायता प्रदान करता है।

1. फसलों में नत्रजन, फास्फोरस, पोटैशियम का संतुलित मात्रा में उपयोग करने से उनका समुचित विकास होता है, परन्तु नत्रजन के अधिक मात्रा में उपयोग करने से फसलों में पत्तियों का अधिक विकास होता है जिससे कीड़े फसलों की ओर आकर्षित होते हैं और उन्हें नुकसान पहुंचाते हैं।
2. पौधों में नत्रजन की अधिक मात्रा उपलब्ध होने से नत्रजनधारी यौगिकों की एकत्रीकरण होने लगता है जिससे एस्परेजिन और पेट्रोसिन नामक पदार्थ बनने लगते हैं इनसे एमाइड और अमीनों एसिड कीड़ों और रोगों की जीवाणुओं को आसानी से मिलने लगते हैं जिससे इन्हें शीघ्र पनपने में मदद मिलती है और पौधे रोग ग्रसित हो जाते हैं। पोटाश की समुचित मात्रा की उपस्थिति में उपर्युक्त पदार्थों का निर्माण नहीं होता है और इस प्रकार पोटाश बीमारियों से फसल की सुरक्षा में सहायक होता है।
3. पौधों में समुचित मात्रा में पोटाश की उपस्थिति होने से कीड़ों और बीमारियों के जीवाणुओं द्वारा प्रकोप में धनात्मक आयन होने से उनका आयनिक संतुलन बिगड़ता है। जिससे जीवाणु पौधों पर प्रकोप करने से कतराते हैं। इस प्रकार पोटाश के उपयोग से फसल के बचाव में मदद मिलती है।
4. पोटाश से पौधों में ऑसमोटिक दबाव कायम रहता है। परिणामस्वरूप प्रकाश संश्लेषण से पत्तियों में निर्मित पदार्थों जैसे स्टार्च और कार्बोहाइड्रेट का सम्पूर्ण पौधों के भागों में संचार होता रहता है और उनका अनावश्यक जमाव नहीं होता है।

पोटैशियम के कार्य :

1. पोटाश पौधों के किसी भी अंग के निर्माण में भाग नहीं लेता, लेकिन इसकी उपस्थिति से पौधों में ओजस्वी वर्षद्धि दिखाई देती है। इसीलिए पोटैशियम की पर्याप्त मात्रा पौधों के नये और बढ़ते हुए भागों में उपस्थित होता है। जहां पर वानस्पतिक क्रिया सर्वाधिक होती है। इसकी मात्रा पौधों के पुराने अंगों में सबसे कम पायी जाती है।
2. पौधों को रोग, शीत तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के लिए प्रतिरोधी बनाता है तथा क्लोरोफिल बनने की क्रिया को प्रोत्साहित करता है। यह प्रोटीन निर्माण में भी सहायक है।
3. शर्करा तथा स्टार्च के निर्माण और पौधों के अन्दर उनके आवागमन और वितरण में सहायक है।
4. पोटैशियम का विशेष प्रभाव पत्तियों के विकास पर पड़ता है। कोशिकाओं के निर्माण तथा विभाजन में सहायक है। यह तने को मजबूती प्रदान करके फसल को गिरने से बचाता है। इसके कारण पौधे में कठोरता आती है।
5. पौधों में पानी के उपयोग को नियंत्रित करता है। अर्थात् कोशिकाओं के अन्दर जल की मात्रा तथा वाष्पोत्सर्जन से जल ह्रास को संतुलित करता है।
6. नत्रजन तथा फास्फोरस के प्रभाव को संतुलित करता है।
7. अन्न वाली फसलों में दाना, आलू के कन्द तथा जड़ वाली सब्जियों का आकार बढ़ाता है। यह तम्बाकू की पत्तियों की, कपास के धागे की तथा फसलों की गुणवत्ता बढ़ाता है।

पोटाश जहां एक ओर पौधों के भोजन के काम आता है। वहीं दूसरी ओर कीड़े और मकोड़ों से फसल की रक्षा करके सहायता करता है।

पौधों में समुचित मात्रा में पोटाश की उपस्थिति होने से कीड़ों और बीमारियों के जीवाणुओं द्वारा प्रकोप करने पर पोटाश के घनात्मक आयन होने से कीड़ों और जीवाणुओं

का आयनिक सन्तुलन बिगड़ता है जिससे वे पौधे पर आक्रमण करने से कतराते हैं इस प्रकार पोटाश द्वारा फसल बचाव में मदद मिलती है।

पोटाश पौधों में ऑसमोटिक दबाव कायम करता है जिससे स्टार्च और कार्बोहाइड्रेट का सम्पूर्ण पौधे के भागों में संचार होता रहता है और उनका आवश्यक जमाव नहीं होता।

पौधों में पोटैशियम की कमी के कारण

1. पत्तियों के किनारे झुलस जाते हैं तथा झुलसे हुए किनारे भूरे रंग के होते हैं।
2. तने कमजोर होने से पौधों की वृद्धि ठीक प्रकार से नहीं हो पाती है। जड़ें सड़ने लगती हैं।
3. पौधे में बीमारी ज्यादा लगती है। डोडे छोटे तथा कम खिले हुए होते हैं।
4. पत्तियों में क्लोरोफिल बनना कम हो जाता है।

विभिन्न फसलों द्वारा भूमि से लिए गये पोषक तत्वों की मात्रा :

विभिन्न फसलों को पोषक तत्व सम्बन्धी अपनी विभिन्न आवश्यकतायें होती हैं। किन–किन फसलों में कितना खाद डालें, यह निश्चित करने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए –

1. आप कौन–सी फसल उगाना चाहते हैं ?
2. फसल उगाने का उद्देश्य
3. फसल की किस्म
4. भूमि की किस्म
5. जलवायु
6. खाद की किस्म
7. इत्यादि

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम भूमि में पोषक तत्वों की कम से कम उतनी मात्रा उपलब्ध करा दें जितनी वह फसल अपने जीवन काल में भूमि से प्रयोग करती है ऐसा करने पर भूमि की उर्वरता ज्यों की त्यों बनी रहेगी और कृषक को पर्याप्त उपज मिलती रहेगी। हमारे देश में अधिकांश भूमियों में पोटाश तत्व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। अतः इन पोषक तत्वों को केवल उन्हीं सीनों में और उन्हीं फसलों के लिए खाद रूप में देना चाहिए जहां इन तत्वों को भूमि में उपलब्ध करने पर किसी फसल विशेष की उपज में वृद्धि होती है।

तालिका 2 : विभिन्न फसलों द्वारा अपने जीवन काल में भूमि से लिए गये पोषक तत्वों की मात्रा

क्रमांक	फसलें	उपज किग्रा प्रति हे0	फसलों द्वारा उपयोग किए गए पोषक तत्वों की मात्रा (किग्रा प्रति हे0)		
			नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
1.	धान–दाना	2250	29	16	9
	पुआल	4500	31	9	84
2.	ज्वार–दाना	1120	16	10	8
	कड़बी	3360	14	8	73
3.	बाजरा–दाना	2020	17	7	10
	कड़बी	3360	16	5	90
4.	मक्का–दाना	1120	36	19	11
	कड़बी	4040	44	13	65
5.	गेहूँ–अन्न	1570	25	13	08
	भूसा	3140	15	4	39
6.	जौ–दाना	1680	30	13	8
	भूसा	2800	20	7	39
7.	कपास–कपास	1680	45	18	18
	तनें	3140	40	11	40
8.	गन्ना	75750	168	70	336

उदाहरण के लिए कपास की फसल, जिसकी औसत उपज लगभग 1000 किग्रा प्रति हे0 है, भूमि से लगभग 80 किग्रा नत्रजन, 30 किग्रा फास्फोरस, 50 किग्रा पोटाश और 20 किग्रा चूना प्रति हे0 की दर से प्रयोग करते हैं लेकिन कपास पर किए गए अनेक प्रयोग के आधार पर यह सिद्ध हो चुका है कि उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में कपास की उपज पर फास्फोरस या फास्फेटी खाद का कोई अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता। इससे यह प्रकट होता है कि कपास के लिए भूमि में फास्फेट की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध है।

अतः कपास की फसल के लिए उस भूमि विशेष में फास्फोरस खाद देने की आवश्यकता नही है। उत्तर प्रदेश में नत्रजन की प्रायः सभी भूमियों में कमी है। अतः विभिन्न फसलें उगाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस तत्व को हम भूमि से कम से कम उतनी मात्रा में तो अवश्य ही उपलब्ध करा दें। जितनी मात्रा में कि यह फसल इस तत्व को अपने जीवनकाल में मिट्‌टी से ग्रहण करती है।

विभिन्न खेतों में मिट्टियां बनावट में भिन्न होती है और उनमें पोषक तत्वों की मात्रा भी समान नहीं होती। कुछ पोषक तत्व तो भूमि में मिट्‌टी के निर्माण के समय से ही उपस्थित नहीं होते और कुछ की कमी सापेक्षित अघुलनशील के कारण हो जाती है। बिना पर्याप्त खाद दिए भूमि पर बार–बार फसलें उगाने पर भी भूमि की उर्वरता घट जाती है।

तालिका–2 में विभिन्न महत्वपूर्ण फसलों द्वारा अपने जीवनकाल में मिट्‌टी से उपयोग किए गये पोषक तत्वों की मात्रायें दी गयी हैं।

अतः भूमि की उर्वरता को बनाये रखने तथा उसकी उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए यह परम आवश्यक है कि फसल बोने से पूर्व भूमि में पर्याप्त मात्रा में खाद और उर्वरकों का उपयोग किया जाये। अच्छे उन्नत बीजों के फलस्वरूप अधिक उपज तभी सम्भव है। जबकि कृषि में उन्नत कृषि विधियों को अपनाया जाये और भूमि में पर्याप्त मात्रा में पानी का प्रबन्ध किया जाये।

पृष्ठ सं० 07––का शेष

चेंपा : इसकी दो किस्में गुलदाऊदी को क्षति पहुँचाती है। एक पौधे की साधारण जुएं अथवा ग्रीन फ्लाई और दूसरा काला चेंपा पर होता है। ये शाखाओं के कोमल सिरों पर भी लग जाते हैं और बाहरी त्वचा को बाँधकर, शाखाओं के जीवन रस को चूस लेते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जब ये कीट पौधों की शाखाओं पर ही हो तों तम्बाकू की महीन बुकनी बुरक कर एक दो दिन का अन्तराल देकर जल से छिड़काव कर दें अथवा खुले मौसम में, सायंकाल को साबुन, बासुडीन या फालीडॉल का घोल भी छिड़क सकते हैं, परन्तु ठण्डे मौसम में इस घोल का छिड़काव कदापि न करें।

हरी मक्खी : कलियाँ आने के समय, पौधों के शीर्षो पर पत्तियों के मध्य इनका जमाव हो जाता है। इसी समय अन्य रस चूसने वाले कीट भी आक्रमण करते है। इनकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफास 2 मिली एक लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें, क्योंकि इन सिरों पर इनका जमाव होता है। इसकी रोकथाम के लिए तम्बाकु के पानी का घोल भी छिड़का जा सकता है।

तम्बाकू का पानी बनाने की विधि : 2 किग्रा कुंटा हुआ तम्बाकू, एक बाल्टी पानी मे ंरात भर भिगोकर रखें। अगले दिन 30 ग्राम फिटकरी पीसकर उसमें डाल दें। धूप के समय इस घोल में गमले उलटकर पौधों के सिरों को डुबोडुबोकर निकाल लें और एक घण्टे तक गलमों को लिटाकर रखें जिससे अधिक घोल टपककर नीचे निकल जाएं। यदि पौधे क्यारियों में हो तो उस स्थिति में घोल को छानकर छिड़काव करें।

व्हाइट बीटिल मैगट : ये जड़ों में लग जाते हैं और उनको खाकर समाप्त कर देते हैं। यदि भली प्रकार रोपित पौधे मुरझाये हुए दिखाई दे। तो इन्हीं के कारण समझें। ऐसी दशा में गमले से पौधों के पिण्ड निकालकर और उनकी पुरानी दूषित मिट्‌टी झाड़कर नवीन कीटाणु रहित शुद्ध मिट्‌टी में लगा दें ।

"वर्मी कम्पोस्ट मृदा स्वास्थ्य व पर्यावरण के लिए उत्तम जैविक खाद"

चन्द्र प्रकाश कुशवाहा
रिपोर्स पर्सन (वर्मी कम्पोस्टिंग एवं जैविक खेती) एवं प्रगतिशील किसान/
क्षेत्र सहायक, डीएसटी परियोजना, सैम हिग्गिनबॉटम कृषि,
प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
मो0-09956470389 ई-मेलः cpkushwaha43@gmail.com
निवास-टिकरी तालुका कंजासा, जसरा, इलाहाबाद (उ0प्र0)

"जैविक को बनाइए, खेती का आधार।
वर्मी से कर लीजिए कचरे का उद्धार।।"

देश में विगत कुछ वर्शो से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरकों का अंधाधुन्ध अनियंत्रित प्रयोग किया जाता रहा है। जिसकी वजह से मृदा स्वास्थ एवं मृदा में उपलब्ध लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में भारी ह्रास हुआ है। फलतः मृदा की उत्पादन शक्ति क्षीण हुई है अतएव मृदा को स्वस्थ्य बनाये के लिए लक्षित उत्पादन प्राप्त करने के लिए उत्पादन लागत कम लगने तथा पर्यावरण एवं स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से यह आवश्यक हो गया है कि रासायनिक उर्वरकों जैसे कीमती निवेश के प्रयोग को एक हद तक कम करके उसकी प्रतिपूर्ति हेतु जैव उर्वरकों एवं जैविक खादों की प्रयोग को अत्याधिक बढ़ावा दिया जाय। जिसमें जैविक खादों में वर्मी कम्पोस्ट का प्रमुख स्थान है।

"वर्मी कम्पोस्ट क्या है?"

खरपतवारों एवं गोबर (कार्बनिक/जीवांश पदार्थ) से केंचुओं द्वारा कम्पोस्ट बनाने की विधा को वर्मी कम्पोटिंग कहते है। इस विधि से जो कम्पोस्ट (खाद) तैयार होती है उसे वर्मी कम्पोस्ट या केंचुए की खाद कहते है। जो हर प्रकार के पेड़-पौधों, फलदार वृक्षों, सब्जियों, फसलों के लिए पूर्ण रूप से प्राकृतिक सम्पूर्ण एवं सन्तुलित आहार है।

"वर्मी कम्पोस्ट तैयार करने में किन-किन चीजों का प्रयोग कर सकते है?"

बेकार पड़ी कार्बनिक/जीवांश पदार्थो जैसे पेड़-पौधों की पत्तियाँ फसल अवशेष, घास-फूस, कृषि उद्योगों का व्यर्थ पदार्थ, जलकुम्भी, गोबर, रसोई का जूठन आदि सड़ने-गलने वाले पदार्थ को वर्मी कम्पोस्ट बनाने में प्रयोग कर सकते है।

"वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि क्या है?"

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए छायादार व ऊचें स्थानो पर जहां पानी न टिकता हो सर्वप्रथम पिट का निर्माण किया जाता है। इसके लिए 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा, 1/2 मीटर गहरा आयताकार एक गड्ढा (पिट) का निर्माण करते है यह ईट बालू सीमेंट का पक्का होगा। उसके बाद गड्ढे के अन्दर तालाब की गीली या उपजाऊ खेत की मिट्टी आधा इंच बिछा कर वर्मी बेड तैयार कर लें। भराई के लिए दो दिन पुराना गोबर (गैस रहित) फसल अवशेष तथा जलकुम्भी के छोटे-छोटे टुकड़े मिक्स करें, गड्ढे में भर दें फिर उसमें दो किलोग्राम केंचुआ डालकर जूट के बोरे से ढक कर पानी का छिड़काव कर दें इसको तैयार होने के लिए 40-50 प्रतिशत नमी तथा 28-32 डिग्री सेल्सियम तापमान होना जरूरी है। इसके लिए आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव तथा सप्ताह में दो बार पलटाई करते

रहने से केंचुएं अच्छी तरह काम करते रहते है जिससे कम्पोस्ट जल्दी तैयार होती है।

''वर्मी कम्पोस्ट के लिए केंचुएं की प्रजाति क्या होनी चाहिए?''

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए केंचुओं की अहम भूमिका होती है इसके लिए मुख्य प्रजाति **एपीजेइक** जिसका वैज्ञानिक नाम **इसेनिया फोटीडा** है। इसको लाल केंचुए भी कहते है। इसके अलावा केंचुओं की अन्य प्रजातियां जैसे–**एनासिक, इण्डोजेइक, ड्यूड्रिल्स ड्यूजिनी, डावीटा कलेवी, डिगोगास्टर बोलाई, लैम्पीटो माउरीटी, पेरिचानिरस एक्सबकेटस** आदि है जो वर्मी कम्पोस्ट बनाने में कारगर है लेकिन **इसेनिया फोटीडा** सबसे उत्तम प्रजाति मानी गई है और यही प्रजाति अक्सर दिखाई देती है।

''वर्मी कम्पोस्ट कितने दिन में तैयार होती है? और कम्पोस्ट व केचुओं को कैसे अलग करते है?''

यह करीब 45 से 60 दिन में तैयार होता है। लेकिन केंचुओं की संख्या और प्रबन्धक पर भी निर्भर करता है। कम्पोस्ट व केंचुए को अलग करने से पूर्व खाद तैयार होने के बाद 4–5 दिन पूर्व पानी डालना बन्द कर दें और छायादार स्थान पर खाद को सुखाकर 2 मिली मीटर के छनित्र (छन्ना) से छान कर अलग कर लेते है और पुनः केचुओं को पूर्व की भांति गड्ढे की भराई कर गड्ढे में डाल दें।

''क्या केंचुओं के कोई शत्रु भी है? हैं तो क्या बचाव है?''

जी हाँ इनके शत्रु लाल चीटी, चूहे, चिड़िया व नमी आदि है। इनके बचाव के लिए जूट के बोरे से ढके रहे और पानी का छिड़काव, आवश्यकतानुसार करते रहे बीच–बीच में बोरे उठाकर देखते रहे चूहों के बिल हो तो पलटाईकर बिल में पानी डाल दें और लाल चीटी के बचाव हेतु 0.01 प्रतिशत लाल मिर्च का पाउडर पानी के साथ घोल कर छिड़काव कर देने से केंचुए सुरक्षित है।

''वर्मी कम्पोस्ट में पाये जाने वाले पोषक तत्व''

इनमें जिन पोषक तत्वों की उपलब्धता है वह इस प्रकार है :–

आर्गेनिक कार्बन–9.15– 17.89 प्रतिशत

नत्रजन–1.00–1.5 प्रतिशत

फास्पोरस–0.5–1.5 प्रतिशत

पोटाश–0.6–1.00 प्रतिशत/सोडियम–0.06–0.3 प्रतिशत

कापर–22.67–70.00 प्रतिशत, मैग्निशियम–22.67–70.00 प्रतिशत

कापर–2.00–9.3 पीपीएम, आयरन–2.00–9.3पीपीएम

जिंक–5.7–11.5 पीपीएम, सल्फर–128–548 पीपीएम

मॉलिब्लेडनम–16.3–17.5 पीपीएम, मैग्नीज–8.04–12.01 पीपीएम

निकिल–7.18–8.02 पीपीएम, कोबाल्ट–14.03–16.88 पीपीएम

''वर्मी कम्पोस्ट प्रयोग करने की मात्रा क्या होनी चाहिए?''

इसका प्रयोग फसलो के आधार पर होती है। **औद्यानिक फसलों** (आलू, टमाटर, गोभी, लौकी, कद्दू, भिन्डी, कैरला, बागवानी आदि) में 2–3 टन प्रति हेक्टेयर, **धान्य फसलें** (धान, गेंहू, ज्वार, बाजरा, मक्का, सरसों, मूगफली, एवं दालें आदी) में 2–2–1/2 टन प्रति हेक्टेयर **मषालों की खेती** (प्याज, लहसून, मिर्च, अदरक धनिया, हल्दि आदि) 2.5 से 3 टन प्रति हेक्टेयर, **नकद फसलों की खेती** (कपास, गन्ना, तम्बाकू, सोयाबीन आदि) में 3–4 टन प्रति हेक्टेयर प्रति हेक्टेयर, **फूलों की खेती** में 4–5 टन प्रति हेक्ट0, **औषधीय पौधों की खेती** में 5–6 टन प्रति हेक्टे0 प्रयोग किया जाता है।

''वर्मी कम्पोस्ट से लाभ क्या है ?''

''जैविक को बनाइए, खेती का आधार।
वर्मी से कर लीजिए कचरे का उद्धार।।''

1. मृदा के भौतिक तथा जैविक गुणों में सुधार होता है।
2. मृदा संरचना तथा वायु संचार में सुधार हो जाता है।
3. जल धारण क्षमता को बढ़ाता है।
4. नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है।
5. कूड़े कचरे से होने वाले प्रदूषण पर नियंत्रण होता है।
6. कूड़े कचरे से होने वाले प्रदूषण पर नियंत्रण होता है।
7. वर्मी कम्पोस्ट एक लघ कुटीर उद्योग के रूप में रोजगार का अवसर प्रदान करता है।

शेष पृष्ठ सं० 24--पर

पोषण से भरपूर हरी पत्तेदार सब्जियां

अरूणा लकडा
एम.एस.सी. छात्रा
उद्यान विज्ञान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

योगेश कुमार पटेल
एम.एस.सी. छात्र
उद्यान विज्ञान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ0 देवी सिंह
सह–प्रवक्ता
उद्यान विज्ञान विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

हरी पत्तेदार सब्जियां महत्वपूर्ण खनिज लवण एवं विटामिन का भंडार होती हैं इनमें आयरन, फोलिक एसिड, कैल्शियम, खनिज लवण विटामिन 'ए' विटामिन 'सी' और विटामिन 'बी' कामप्लेक्स समूह प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इन सब्जियों में कुछ प्रोटीन भी होती है। हालाकि इनमें प्रोटीन की मात्रा बहुत कम होती है। हरी, पत्तेदार सब्जियों को अगर अनाज और दालों के साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जाए तो भोजन में प्रोटीन की मात्रा बहुत बढ़ जाती है। इन सब्जियों के महत्व व लाभ को ध्यान में रखते हुए अपने दैनिक भोजन में इनको शामिल किया जाना चाहिए। इनमें कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्व पाए जाते हैं जैसेः–

विटामिन 'ए' से परिपूर्णः– विटामिन 'ए' एक वसा में घुलनशील विटामिन है, जिसका आंखों के स्वास्थ्य के लिए विशेष महत्व है। विटामिन 'ए' हमें मक्खन, घी, दही, अंडे की जर्दी आदि में होता है लेकिन पत्तेदार हरी सब्जियाँ देकर प्रकृति ने हमें सुरक्षा प्रदान की है। गाजर, टमाटर, आम, पपीता व अन्य रंगीन सब्जियों में "कैरोटीन" नामक पदार्थ होता है। यह हमारे शरीर में विटामिन 'ए' में बदल जाता है। और यह हमारी आंखों की सुरक्षा करता है साथ ही बिमारियों के प्रति प्रतिरोधक शक्ति के विकास में मदद करता है।

आयरन का भंडारः– हमारा शरीर तभी स्वस्थ रहेगा जब हमारे शरीर में रक्त पर्याप्त मात्रा में हो और इसके लिए हमारे शरीर को आयरन, फोलिक एसिड, विटामिन बी, विटामिन 'सी' प्रोटीन जैसे पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। यदि हम अपने आहार में आयरन की पर्याप्त मात्रा ना लें तो "एनीमिया" हो सकता है। ऐसी स्थिति में रक्त में हीमोग्लोबिन कम हो जाता है। किसी भी उम्र में एनीमिया हो सकता है, परंतु गर्भवती महिलाओं और बच्चों में इसका ज्यादा प्रभाव पड़ता है। पत्तेदार सब्जियों में आयरन भरपूर मात्रा में होता है हमें दैनिक आहार में 325 ग्राम लगभग सभी सब्जियों का इस्तेमाल करना चाहिए। इसमें 125 ग्राम हरी सब्जियां हो इससे आयरन की आवश्यकता पूरी हो सकती है। पत्तेदार हरी सब्जियों को खट्टे फलों में उपस्थित विटामिन 'सी' आयरन के अवषोशण में मदद करता है।

रेषे से परिपूर्णः–
हरी पत्तेदार सब्जियों से जो रुक्षांश प्राप्त होता है, वह हमारे भोजन को अच्छे से पचाने के लिए भी लाभदायक होता है और कब्ज से बचाने में भी सहायक होता है। हरे पत्तेदार सब्जियों के महत्व व लाभ को ध्यान में रखते हुए अपने दैनिक भोजन में इस को शामिल किया जाना चाहिए। परंपरात व्यंजनों के अतिरिक्त हरी पत्तेदार **सब्जियों का उपयोग हम निम्न प्रकार से कर सकते हैंः–**

(i) चपाती, मिस्सी रोटी, पराठा आदि तैयार करने के लिए अनाज के आटे में पत्तेदार सब्जियां काट कर मिला सकते हैं।

कुछ हरी पत्तेदार सब्जियों में पोषक तत्वों की मात्राः—							
नाम	उर्जा (कि.कै.)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	आयरन (मि. ग्रा.)	विटा. सी (मि. ग्रा.)	कैरोटीन (मा. ग्रा.)	रेशा (ग्राम)
बंद गोभी	27	1.8	0.1	0.8	124	1200	1.0
चना भाजी	97	7.0	1.4	23.8	61	978	2.0
पालक	26	2.0	0.7	10.9	28	5580	0.6
मुनगा भाजी	92	6.7	1.7	7.0	220	6780	0.9
धनिया पत्ती	44	3.3	0.6	18.5	135	6918	1.2
बथुआ	30	3.7	0.4	4.2	35	1740	0.8
सरसों भाजी	34	4.0	0.6	16.3	33	2622	0.8
मूली भाजी	28	3.8	0.4	3.6	81	5295	1.0
पुदीना	48	4.8	0.6	15.6	27	1620	2.0

(ii) पत्तेदार सब्जियां मिलाकर दाल तैयार कर सकते हैं।

(iii) खिचड़ी, उपमा आदि जैसे पकवानों में पत्तेदार सब्जियां मिला सकते हैं।

(iv) हरी पत्तेदार सब्जियों से "रायता" तैयार कर सकते हैं।

(v) पत्तेदार सब्जियों में थोड़ा पानी मिलाकर उबालें और इससे आटा मिलाकर पूड़ियाँ तैयार कर सकते हैं।

अधिकतम पोषक तत्व संरक्षित रखने के लिए सब्जियों को ध्यानपूर्वक पकाएँ।

(i) विशेष रुप से जब हरी सब्जियों को सलाद के रूप में उपयोग करना हो तो हरी सब्जियों को काटने से पहले अच्छी तरह धोवें।

(ii) पकाने के लिए कम से कम मात्रा में पानी का उपयोग करें।

(iii) जिस पानी से पत्तेदार सब्जियां पकाई गयी हो, उस पानी को न फेंके। इसे दाल, सूप में प्रयोग करें अथवा बच गया हो तो इससे आटा गूथें।

(iv) पत्तेदार सब्जियों को थोड़ी देर तक भी पकाएँ।

(v) इन्हें ढककर पकाएँ और ज्यादा न तलें।

हरी पत्तेदार सब्जियां शरीर के विकास और समान्य स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। इसलिए गृहवाटिका में महिलाएँ आसानी से इसका उत्पादन कर अपने परिवार को संतुलित आहार दे सकती हैं। साथ ही हरी पत्तेदार सब्जियों को सुखाकर भी पूरे वर्ष इनका इस्तेमाल कर सकती है।

पृष्ठ सं० 22--का शेष

8. फलों, सब्जियों तथा खाद्यान्नों की गुणवत्ता बढ़ाती है तथा उनके ऊपज में भी वृद्धि होती है।
9. यह रासायनिक उर्वरकों की खपत कम करके मृदा स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने का प्रभावी उपाय है।
10. मृदा की पी.एच., ई.सी. का सुधार होता है और फास्फेट, पोटाश, कैल्सियम, मैग्निशियम आदि तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
11. विष रहित, गुणवत्ता युक्त उत्पादन होता है।
12. वायु तथा जल प्रदूषित होने से बचाता है।

तू भूमि की सुधि लेकर उसको सींचता है, तू उसको बहुत फलदायक करता है; परमेश्वर की नहर जल से भरी रहती है; तू पृथ्वी को तैयार करके मनुष्यों के लिए अन्न को तैयार करता है। *भजन संहिता 65:9*

तोरई की फसल में अच्छी उपज लेने के लिए आवश्यक कृषि कार्य

डॉ0 बालाजी विक्रम	डॉ0 विक्रम सिंह	डॉ0 विजय बहादुर	डॉ0 वी0 एम0 प्रसाद
अध्यापन सहायक	सह – प्रवक्ता	सह – प्रवक्ता	प्रवक्ता एवं विभागाध्यक्ष
उद्यान विभाग	सस्य विभाग,	उद्यान विभाग	उद्यान विभाग

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद – 211007

तोरई हर प्रकार की जलवायु में उगायी जा सकती है परन्तु तोरई के सफल उत्पादन के लिए उष्ण और नम जलवायु उतम मानी गई है। तोरई को मैदानी भागों में गर्मी के मौसम में मार्च से लेकर जून तक की जा सकती है। इन सब्जियों की अगेती खेती अधिक आमदनी देती है। जाड़े के मौसम में इन सब्जियों की नर्सरी तैयार करने के लिए पॉली हाउस तकनीक का उपयोग किया जा सकती है। पहले इन सब्जियों की पौध तैयार करते हैं तथा फिर मुख्य खेत में जड़ो को बिना क्षति पहुँचाये रोपण का कार्य करते हैं। भारत में इसकी खेती उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, पंजाब, राजस्थान, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक और महाराष्ट्र में विशेष रूप से की जाती है।

भूमिः–

इसको सभी प्रकार की मिट्टियों में उगा सकते हैं परन्तु उचित जल निकास धारण क्षमता वाली जीवांश युक्त हलकी दोमट भूमि इसकी सफल खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। वैसे उदासीन पी.एच. मान वाली भूमि इसके लिए अच्छी रहती है। नदियों के किनारे वाली भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त रहती है कुछ अम्लीय भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। पहली जुताई मिटटी पलटने वाले हल से करनी चाहिए इसके बाद 2.3 बार कल्टीवेटर चलाकर खेत की मिट्टी को भुरभुरी करके तैयार कर लेते हैं।

लगानें का समयः–

वर्षा कालीन फसल के लिए :– जून से जुलाई।
ग्रीष्म कालीन फसल के लिए :– जनवरी से मार्च।

फसल लगाने का तरीकाः–

पंक्तियों और पौधों की आपसी दूरी 1.0–1.20 मीटर और 1 मीटर रखते है। बीज को अधिक गहराई में नहीं लगाना चाहिये तथा एक स्थान पर हमेशा 2 बीज की बुआई करनी चाहिए। यदि बीज ज्यादा गहराई में डाल दिया जाता है तो अंकुरण में कमी आ जाती है। बीज की पर्याप्त मात्रा 4.5 किलोग्राम प्रति हेक्टर होती है। बुआई करने से पहले बीजों को केप्टान (2 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज) के हिसाब से उपचारित कर लेना चाहिए। अंकुरण कराने के लिए सर्वप्रथम बीजों को पानी में भिगो देते है, तत्पश्चात उन्हें एक सुती कपड़े या बोरे के टुकड़े में लपेट कर किसी गर्म स्थान पर जैसे बिना सड़ी हुई गोबर की खाद या भूसा या अलाव बुझ जाने के बाद गर्म राख में रखते है।

खाद एवं उर्वरकः–

खेत की अन्तिम जुताई के समय 200–500 कुन्टल सड़ी–गली गोबर की खाद मिला देना चाहिए। सामान्यतः अच्छी उपज लेने के लिए प्रति हेक्टेयर 240 किग्रा यूरिया, 500 किग्रा सिगंल सुपर फास्फेट एवं 125 किग्रा म्यूरेट ऑफ पोटास की आवश्यकता पड़ती है। इसमें सिंगल सुपर फास्फेट एवं पोटास की पूरी मात्रा और

युरिया की आधी मात्रा नाली बनाते समय कतार में डालते है। यूरिया की चौथाई मात्रा रोपाई के 20– 25 दिन बाद देकर मिट्टी चढ़ा देते है तथा चौथाई मात्रा 40 दिन बाद टापड्रेसिंग से देना चाहिए। लेकिन जब पौधों को गढढ़े में रोपते है तो प्रत्येक गढढ़े में 30–40 ग्राम यूरिया, 80–100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट व 40–50 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटास देकर रोपाई करना अच्छा होता है।

प्रजातियाँ :–

सरपूतिया– इस जाति के फल छोटे और गुच्छों में लगते है एक गुच्छे में 5–7 फल लगते है बुवाई के 60–70 दिनों के बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते है। यह जाति उत्तर प्रदेश, बिहार और पंजाब में अधिक प्रचलित है।

पंजाब सदा बहार– इस जाति के पौधे मध्यम आकार के होते है फल 20 से. मी. लम्बे और 3.5 से. मी. चौड़े होते है। फल पतले, कोमल, गहरे हरे रंग के और धारी दार होते है इस जाति में अन्य जाति की तुलना में अधिक प्रोटीन पाया जाता है।

पूसा नसदार, कोयम्बटूर–9, कोयम्बटूर–2, पी.के.एम. –1, पूसा चिकनी, कल्याणपुर चिकनी, राजेन्द्र नेनुआ 1, राजेन्द्र आशीष, सी.एच.आर.जी.–1 पूसा स्नेहा और स्वर्ण मंजरी आदि प्रजातियॉ भी अच्छी पैदावार देती हैं।

आवश्यक सिचाई:–

गर्मियों वाली फसल लेते समय प्रायः 5–6 दिन के अन्तरा से सिंचाई करते हैं जबकि वर्षाकालीन फसल की सिंचाई वर्षा के ज्यादा या कम होने पर निर्भर करती है। खेत में नमी के अनुसार ही फसलों में सिंचाई करना चाहिए। सिंचाई हमेशा शाम के समय ही करना अच्छा रहता है।

खरपतवार नियत्रण:–

तोरई की फसल में अधिक निराई की आवश्यकता होती है। फसल के साथ उगे खरपतवारों को निकालकर नष्ट करते रहना चाहिए। इसमें कुल 2–3 निराइयों के साथ–साथ लताओं को व्यवस्थित करने की भी आवश्यकता होती है ताकि उनका समुचित विकास हो सके।

कीटों का नियंत्रण:–

लालकीड़ा:–

पौधों पर दो पत्तियां निकलने पर ही इस कीट का प्रकोप शुरू हो जाता है। यह कीट पत्तियों और फूलों को खाता है। इस कीट की सुंडी भूमि के अन्दर घुसकर पौधों की जड़ों को काटकर क्षति पहुंचाती है।

रोकथाम–

❖ 750 मि.ली. आक्सीडेमेटान मिथाइल (मैटासिस्टाक्स) 25 ई.सी. या 625 मि.ली. डाइमेथोएट (रोगार) 30 ई. सी. या 180 मि.ली. फासफेमिडान (डाइमेक्रोन) 85 डब्लयू.एस. या 500 लीटर मि.ली. मोनोक्रोटोफास (न्यूवाक्रान/मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ के हिसाब से छिडकें ।

फल की मक्खी:–

यह मक्खी फलों में प्रवेश कर जाती है और वहीं पर अंडे देती है अण्डों से बाद में सुंडी निकलती है तथा यह फल को बेकार कर देती है। यह मक्खी विशेष रूप से खरीफ वाली फसलों को ज्यादा हानी पहुंचाती है।

रोकथाम–

- 750 मि.ली. एण्डोसल्डान (थायोडान/हिल्डान) 35 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोकोटोफास (न्यूवाक्रान/मोनोसिल) 36 डब्लयू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें ।
- इसके नियंत्रण को मेटासिस्टाक्स एक लीटर दवा प्रति हेक्टेयर के दर से तथ दूसरा छिड़काव 15 दिन के अंतर से करना चाहिए।

सफेद ग्रब:–

यह कीट कद्दू वर्गीय पौधों को काफी हानि पहुंचाता है यह भूमि के अन्दर रहता है और पौधों की जड़ों को खा जाता है।

रोकथाम–

♦ कार्बोफयूरान (फयूराडान 3–जी) के दाने 13 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से पौधों के तनों के आसपास 9 वर्गमीटर में (117 ग्राम प्रति पौधा) अच्छी तरह मिलायें तथा तुरन्त प्रचुर मात्रा में पानी दें । दवा का प्रयोग फूल आने से पहले करें ।

♦ नीम की खली 1 किलो प्रति पौधा एंव कार्बोफयूरान (फयूराडान 3–जी) के दाने 9 ग्राम प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में (63 ग्राम प्रति पौधा) अच्छी तरह मिलायें तथा तुरन्त प्रचुर मात्रा में पानी दें। खली एंव दवा का प्रयोग फूल आने से पहले करें।

प्रमुख रोग एवं रोग नियत्रण:–

चूर्णी फफूंदी:–

यह रोग ऐरीसाइफी सिकोरेसिएरम नामक फफूंदी के कारण होता है। पत्तियों एवं तनों पर सफेद दरदरा और

गोलाकार जाल सा दिखाई देता है जो बाद में आकार में बढ़ जाता है और कत्थई रंग का हो जाता है। पूरी पत्तियां पीली पड़कर सुख जाती है तथा पौधों की बढ़वार भी रुक जाती है।

रोकथाम–

- 25 से 30 किलोग्राम प्रति हैक्टेअर की दर से गन्धक चूर्ण (300 मेश) को बुरकना चाहिये।
- किसी घुलनशील गन्धकयुक्त कवकनाशी रसायन जैसे थायोविट या सल्फेक्स का 1.0 से 1.2 किग्रा प्रति हैक्टेअर अथवा कैराथेन या कैलेक्सीन का 1.0 से 1.2 लीटर प्रति हैक्टेअर का 10 से 15 दिन के अन्तराल पर दो से तीन बार छिड़काव करें।
- रोग से रक्षा हेतू टेबूकोनाजोल का 500 ग्राम प्रति हैक्टेअर 12–15 दिनों के अन्तराल पर छिड़कना चाहिये। रोग का घनत्व अधिक होने पर यह अन्तराल घटाया जा सकता है।

मृदुरोमिल फफूंदीः–

यह रोग स्यूडोपरोनोस्पोरा क्यूबेन्सिस नामक फफूंदी के कारण होता है। रोगी पत्तियों की निचली सतह पर कोणाकार धब्बे बन जाते है जो ऊपर से पीले या लाल भूरे रंग के होते है।

रोकथाम–

- स्वच्छ खेती जैसे स्वच्छ बीज शैय्या का प्रयोग और रोग ग्रसित फसल अवशेष और खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिये।
- साफ एवं रोग रहित बीज ही बोना चाहिये।
- 2–3 वर्ष का फसल चक्र अपनाया जाए तो भूमि में पड़े निषिक्तांड़ निष्क्रिय हो जाते है।
- ऐसे स्थान एवं ऐसे पौध अन्तरण का प्रयोग करें जिससे पौधों पर सूर्य का प्रकाश पूरे दिन पड़ता रहें।
- यदि गम्भीर रोग दबाव सम्भावित हो तो फसल पर डाएथेन एम–45 अथवा डाएथेन जेड–78 का 1.0–1.2 किग्रा प्रति हैक्टेअर की दर से छिड़काव करना चाहिये।

मोजैकः–

यह विषाणु के द्वारा होता है पत्तियों की बढ़वार रुक जाती है और वे मुड़ जाती है। फल छोटे बनते है उपज कम मिलती है। यह रोग माहू चौंपा द्वारा फैलता है।

रोकथाम–

- स्वस्थ बीज ही प्रयोग करें।
- रोगी पौधों के अवशेषों एवं जंगली खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिये।
- रोगग्रस्त पौधों उखाड़कर सावधानीपूर्वक जला देना चाहिये व इन हाथों से स्वस्थ पौधों का स्पर्श न करें।
- डायमेथोयेट–30 ईसी का 150 ग्राम प्रति हैक्टेअर अथवा इमिडाक्लोप्रिड–17.8 का 125 मिलीलीटर प्रति एकड़ का रोपाई के 21 दिन बाद से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव माहू व अन्य रस चूसने वाले कीटों का अच्छा नियंत्रण करता है।

एन्थ्रेक्नोजः–

यह रोग कोलेटोट्राईकम स्पीसीज के कारण होता है। इस रोग के कारण पत्तियों और फलों पर लाल– काले धब्बे बन जाते है। ये धब्बे बाद में आपस में मिल जाते है। यह रोग बीज द्वारा फैलता है।

रोकथाम–

- बीज को स्वस्थ धब्बें विहीन फलों से एकत्र करना चाहिये।
- साफ एवं स्वस्थ बीज का थाइराम अथवा बाविस्टीन से 2.0–2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचार करना चाहिये।
- कवकनाशी रसायन जैसे ब्लाइटॉक्स–50 अथवा फाइटोलॉन अथवा डाईथेन एम–45 (1.0–1.2 किग्रा प्रति हैक्टेअर की दर से 500 लीटर पानी) का छिड़काव रोग दिखाई देने के बाद 10–15 दिन के अन्तराल पर करें।
- रोगी पौधों एवं खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिये।
- रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग सबसे प्रभावशाली नियन्त्रण विधि है।

तुड़ाईः–

फलों की छोटी अवस्था से ही तुड़ाई कर लेनी चाहिए अन्यथा फल कठोर हो जाते है, जिसके कारण तोरई के गुणों में कमी आ जाती है और बाजार भाव भी कम मिलता है।

उपजः–

इसकी प्रति हेक्टर 100–120 क्विंटल उपज मिल जाती है।

शिखा कुमारी
शोध छात्रा
खाद्य और पोषण विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211007

प्रो0 (डॉ0) सरिता शेख
विभागाध्यक्ष
खाद्य और पोषण विभाग
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211007

पीपल के सभी अंग उपयोगी व अनेक औषधीय गुणों से भरपूर हैं। जहाँ एक ओर यह वृक्ष आध्यात्मिक और धार्मिक महत्व रखता है, वहीं दूसरी ओर आयुर्वेदिक और आर्थिक तौर पर भी महत्वपूर्ण है। पीपल में भगवद्भाव रखकर जल चढ़ाने तथा परिक्रमा करने से आध्यात्मिक लाभ के साथ स्वास्थ्य लाभ सहज में ही मिल जाता है। पीपल शीत, कफ–पित्तशामक, रक्तशुद्धिकर व घाव ठीक करने वाला है। यह मध्य, हृदयपोषक व बल वीर्यवर्धक है।

पीपल के औषधीय उपयोग

वातरक्त (गाउट): प्रोटीन्स के अत्यधिक सेवन से शरीर में यूरिक एसिड की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे वातरक्त हो जाता है। इसमें शरीर के सभी जोड़ो में दर्द व सूजन हो जाती है। 20 ग्राम पीपल की जड़ की छाल 320 मि. ली. पानी में डालकर उबालें। चौथाई पानी शेष रह जाने पर उस काढ़े को गुनगुना होने दें। 1 चम्मच शहद के साथ उसे पीने से गम्भीर वातरक्त भी ठीक हो जाता है।

खूनी बवासीरः पीपल के फलों को सुखाकर चूर्ण बना लें। एक चम्मच चूर्ण का 10 मि.ली. आँवला रस का 10 मि.ली. शहद के साथ दिन में 2 बार सेवन करें।

रक्त पित्तः पीपल के फल का चूर्ण व मिश्री समभाग मिला के रख लें। 1–1 चम्मच चूर्ण दिन में 3 बार पानी के साथ लें।

घावः पीपल के हाल ही में गिरे हुए सूखे पत्तों का चूर्ण लगाने से घाव जल्दी भर जाता है।

सिरदर्द व जुकामः पीपल के चार कोमल पत्ते चबा–चबाकर उनका रस चूसें तथा बाद में पत्तों को थूक दें। दिन में 2–3 बार ऐसा करने से कफ–पित्तजन्य सिरदर्द ठीक हो जाता है। यह जुकाम में भी उपयोगी है।

धातु–दौर्बल्य व मासिक धर्म के विकारः छाया में सुखाये गये पीपल के फलों का चौथाई चम्मच चूर्ण 1 गिलास गुनगुने दूध में मिलाकर रोज पीने से धातु दौर्बल्य दूर होता है। स्त्रियों का पुराना प्रदर–रोग और मासिक की अनियमितता दूर हो जाती है। इससे कब्ज में भी लाभ होता है।

कब्जनाशक प्रयोगः पीपल के सूखे फल, छोटी हरड़ व सौंफ समभाग मिलाकर पीस के रखें। 3 से 5 ग्राम चूर्ण रात को गुनगुने पाने से लेने से कब्ज दूर होता है।

पेट के रोगः 5–5 ग्राम पीपल के पके हुए सूखे फल, छोटी हरड़, सौंफ और 15 ग्राम मिश्री– सबको पीसकर चूर्ण बना लें। रात को सोते समय 3 ग्राम चूर्ण गुनगुने पानी से लें। इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, मल साफ आता है व पेट के कई रोग शांत होते हैं।

फोड़ा, बालतोड़ः पीपल के दूध का फाहा फोड़े या बालतोड़ पर लगाने से वह कुछ ही दिनों में सूख जाता है।

हृदयरोगः 3 ग्राम पीपल के फल का चूर्ण दूध के साथ सेवन करने से कुछ ही दिनों में हृदय रोग में लाभ होता है।

राई–सरसों की फसल में कीट एवं रोग नियंत्रण

डॉ0 शिशिर कुमार
विषय वस्तु विशेषज्ञ
निदेशक प्रसार
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211007

प्रो0 (डॉ0) विल्सन किस्पोट्‌ा
निदेशक प्रसार
सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद–211007

भारतीय कृषि परिप्रेक्ष्य में तिलहनी फसल के रूप में राई–सरसों का विशेष महत्व है। विश्व के कुल तिलहन उत्पादन में प्रयुक्त क्षेत्रफल का 20 प्रतिशत भारत में है। विश्व के कुल तेल उत्पादन का 10 प्रतिशत भाग भारत में उत्पादित होता है। विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन होने के बावजूद राई–सरसों के प्रति इकाई क्षेत्रफल तथा उत्पादकता में विगत कई वर्षों से निरन्तर कमी देखी गयी है। कम उत्पादकता के विभिन्न कारणों में कीट एवं रोग द्वारा की गयी हानि को काफी महत्वपूर्ण माना जाता है। अतः यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि कीटों एवं रोगों की सही पहचान कर उनके नियंत्रण का सही उपाय किया जाए।

सरसों के प्रमुख कीट एवं नियंत्रण :

माहूँ : इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ पीलापन लिए हुए हरे रंग के मुलायम शरीर वाले होते हैं। ये पौधे की सभी अवस्थाओं पर उसे नुकसान पहुँचाती है। शिशु तथा व्यस्क पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों तथा फलियों से रस चूसकर कमजोर कर देते हैं। माहूँ, मधुस्राव करते हैं जिस पर काली फँफूदी उग आती है जो प्रकाश संश्लेषण क्रिया में अवरोध उत्पन्न करती है। इसका प्रकोप दिसम्बर माह से मार्च माह तक फसल पर रहता है।

नियंत्रण :

- सरसों की अगेती बुवाई करने पर माँहू कीट का प्रकोप कम होता है ।
- रासायनिक उर्वरकों की संतुलित मात्रा का प्रयोग करें।
- एजाडिरेक्टिन (नीम का तेल) एक लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से फसल पर छिड़काव करें । डाईमिथोएट 30 ईसी 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से अथवा मोनोक्रोटोफास 36 ई.सी. 500 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें ।

आरा मक्खी : प्रौढ़ मक्खी आकार में बड़ी तथा नीली मक्खी के समान होती है। फसल को हानि पहुँचाने वाली अवस्था लारवा होती है। लारवा तेजी से पत्ती को किनारे से बीच की ओर खाते है। प्रकोप अधिक होने पर पत्तियों में सिर्फ शिराओं का जाल ही शेष रह जाता है।

नियंत्रण :

- बुवाई से पहले खेत की गहरी जुताई अवश्य करें
- पिछली फसल के अवशेष तथा खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए ।
- डाइक्लोरवास 76 ई.सी. की 500 मिली मात्रा अथवा

क्यूनालफास 25 प्रतिशत ईसी 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए ।

चित्रित बग : इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ चमकीले काले, नारंगी एवं लाल रंग के चकत्तेयुक्त होते हैं। शिशु एवं प्रौढ़ पौधे के सभी भागों से रस चूसते हैं। ये कीट अक्टूबर से नवम्बर तथा मार्च से अप्रैल माह तक सक्रिय रहते है। चित्रित बग का अधिक प्रकोप होने पर पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

नियंत्रण :

- बुवाई से पहले खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए
- बुवाई के बाद चौथे सप्ताह में सिंचाई करने से इसका प्रकोप कम हो जाता है ।
- मिथाइल–ओ–डिमेटान 25 ईसी की 1 लीटर मात्रा अथवा मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. की 500 मिली. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए।
- यह कीट फसल की कटाई के बाद भी फसल को नुकसान पहुँचाता है अतः कटी फसल की मड़ाई अति शीघ्र कर लेनी चाहिए ।

बालदार सूंडी : यह सूंडी काले एवं नारंगी रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। प्रारम्भ में यह झुण्ड में रहकर पत्तियों को खाती हैं तथा बाद में पूरे खेत में फैलकर पत्तियों को खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्तीविहीन हो जाता है।

नियंत्रण :

- गर्मी में खेत की गहरी जुताई अवश्य करें ।
- प्रारम्भिक अवस्था में झुण्ड में पायी जाने वाली सूंडियों को पत्तियाँ तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- मैलाथियान 5 प्रतिशत डब्लू.पी. का 20–25 किग्रा/हेक्टेयर की दर से फसल पर बुरकाव करना चाहिए अथवा डाईक्लोरवास 76 प्रतिशत ई.सी. की 500 मिली मात्रा अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ईसी की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

सरसों के प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

सफेद गेरुई : इस रोग के लक्षण जड़ों के अतिरिक्त पौधे के अन्य सभी भागों पर दिखलाई पड़ते है। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पत्ती की निचली सतह पर सफेद गोलाकार धब्बे बनते हैं जिससे पत्तियाँ पीली पड़कर सूखने लगती है। फूल आने की अवस्था में पुष्पक्रम विकृत हो जाता है जिसमें फलियाँ नहीं बनती है।

नियंत्रण :

- स्वस्थ बीज का चयन बुवाई हेतु करना चाहिए।
- बुवाई पूर्व बीज का शोधन ट्राइकोडर्मा हार्जिनियम से 4 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से अथवा मेटालाक्सिल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. की 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से करना चाहिए।
- रोग की अवस्था में खड़ी फसल पर मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा अथवा कॉपर आक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 3 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

झुलसा रोग : प्रारम्भ में इस रोग का प्रमुख लक्षण पुरानी पत्तियों पर छोटे–छोटे काले या स्लेटी रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देता है जो बाद में शेष भागों पर फैल जाता है। बाद में यही धब्बे आकार में बड़े हो जाते हैं तथा प्रकाश की ओर करके देखने पर इनमें छल्ले दिखाई देते हैं। रोग की तीव्रता पर ये धब्बे तने तथा फलियों पर भी फैल जाते है। इस रोग से प्रकोपित फलियों में बनने वाले बीज सिकुड़े हुए तथा आकार में छोटे होते हैं और उनमें तेल की मात्रा भी कम हो जाती है।

नियंत्रण :

- स्वस्थ तथा रोग रहित बीज का चयन बुवाई हेतु करें
- फसल चक्र अपनाना चाहिए।
- बुवाई पूर्व बीज का शोधन थीरम 75 प्रतिशत डब्लू. पी. की 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से करना चाहिए।
- खड़ी फसल में रोग का प्रकोप होने पर मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा मात्रा अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर 15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिता रोग : पत्तियों की निचली सतह पर बैंगनी पूरे रंग के धब्बों के रूप में इस रोग के लक्षण

दिखाई देते हैं। धब्बे बड़े होकर आपस में मिलकर पत्ती की सतह को घेर लेते हैं। पत्तियाँ सिकुड़कर लटक जाती है। रोग की अधिक तीव्रता होने पर पुष्पक्रम पर सफेद चूर्ण की सतह दिखाई देती है।

नियंत्रण :

- ✔ रोगग्रसित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए
- ✔ फसल चक्र अपनाना चाहिए।
- ✔ रोग की प्रारम्भिक अवस्था पर ही फफूंदी नाशक डाइथेन एम–45 अथवा रीडोमिल एम.जेड. 72 प्रतिशत की 2 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 600–800 लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल आसिता : इस रोग का प्रकोप अधिकांशतः फूल बनते समय प्रारम्भ होता है। इस रोग के लक्षण पौधे की पत्तियों, फलियों तथा तने पर सफेद चूर्ण के धब्बे के रूप में दिखाई पड़ते हैं। ये धब्बे आकार में बड़े होकर पूरे पौधे पर फैल जाते हैं।

नियंत्रण :

- ❖ रोग ग्रसित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- ❖ बुवाई पूर्व कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा बीज की दर से बीज का शोधन कर लेना चाहिए।
- ❖ खड़ी फसल में रोग का प्रकोप होने पर घुलनशील गंधक 80 प्रतिशत डब्लू पी की 3 किग्रा मात्रा अथवा कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिश्ज्ञत डब्लू.पी. की 2 किग्रा मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

यहोवा मेरा चरवाहा है, मुझे कुछ घटी न होगी।

वह मुझे हरी हरी चराइयों में बैठाता हैं;

वह मुझे सुखदाई जल के झरने के पास ले चलता है;

वह मेरे जी में जी ले आता है।

धर्म के मार्गो में वह अपने नाम के निमित्त मेरी अगुवाई करता है।

चाहे मैं घोर अन्धकार से भरी हुई तराई में होकर चलूं।

तौभी हानि से न डरूंगा; क्योंकि तेरे सोंटे और तेरी लाठी से मुझे शान्ति मिलती है।

तू मेरे सतानेवालों के साम्हने मेरे लिये मेज बिछाता है;

तू ने मेरे सिर पर तेल मला है,

मेरा कटोरा उमण्ड रहा है।

निश्चय भलाई और करूणा जीवन भर मेरे साथ साथ बनी रहेंगी; और मैं यहोवा के धाम में सर्वदा वास करूंगा।।

भजन संहिता 23:1–6

विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग

सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय

इलाहाबाद - २११००७

Phone- 0532-2684278

हमार गाँव

सदस्यता फार्म

1. नाम :– ....

2. पद :– ....

3. विभाग :– ....

4. पता :– कार्यालय..

....

निवास..

5. दूरभाष :– लैण्डलाइन– कार्यालय....................................निवास..

मोबाइल..

6. वार्षिक सदस्यता शुल्क का भुगतान :– डिमाण्ड ड्राफ्ट/चेक नं0....................................दिनांक..

बैंक ....

धनराशि :– रुपये एक सौ मात्र (रु0 200/–)

(उचित स्थान पर सही का चिन्ह लगायें। नियम–8 देखें) रुपये दो सौ मात्र (रु0 350/–)

''शियाट्स पब्लिकेशन एकाउन्ट'' के पक्ष में देय।

7. वार्षिक सदस्यता अवधि वर्ष.....................के लिए ।

हस्ताक्षर

दिनांक....................

नाम..

यहां से काटिये — यहां से काटिये

यहां से काटिये

नियम एवं शर्तें

लेखक ध्यान दें –

1. हमार गाँव त्रैमासिक पत्रिका के लिए लेख केवल सरल हिन्दी भाषा में ही स्वीकार्य किये जायेंगे।
2. लेख पेपर में केवल एक तरफ डबल स्पेस में टाइप अथवा स्पष्ट हस्तलिखित ही मान्य होंगे।
3. लेख कृषकों, उनके परिवारों के हित में कृषि विज्ञान एवं गृह विज्ञान पर आधारित होने चाहिए।
4. लेख चार पेज (साईज 7.25 x 9.50) से अधिक न हो।
5. हमार गाँव के सदस्यों के ही लेख पत्रिका में प्रकाशित किये जाते हैं।
6. सदस्यता फार्म विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग में उपलब्ध हैं।
7. वार्षिक सदस्यता हेतु शुल्क रुपये एक सौ (रु0 200/–) मात्र एवं संस्थान के लिए सदस्यता शुल्क रुपये दो सौ (रु0 350/–) मात्र निर्धारित है। (रू0 100/– डाकखर्च अतिरिक्त)।
8. हमार गाँव की सदस्यता अवधि प्रत्येक वर्ष जनवरी से दिसम्बर अन्त तक होगी।
9. विद्यार्थियों द्वारा प्रेषित लेख उनके सम्बन्धित विभाग के विभागाध्यक्ष से अग्रसारित होना आवश्यक है।
10. लेख की सम्पूर्ण जिम्मेदारी लेखक की होगी। लेख के लिए विश्वविद्यालय प्रकाशन प्रभाग, शियाट्स, इलाहाबाद किसी प्रकार उत्तरदायी नहीं होगा।

* *शैक्षणिक संस्थानों जैसे संगठन/विश्वविद्यालय/महाविद्यालयों/स्कूलों पर लागू।*